वैज्ञानिक यौवन रक्षक

ब्रह्मचर्य, संयम और स्वास्थ्य रक्षा के वैज्ञानिक तथ्यों से परिचित कराकर स्वस्थ जीवन जीने की कला सिखाने वाली महत्वपूर्ण पुस्तक

लेखक
विश्वजीत सिंह अनंत
युग क्रांतिदर्शी

प्रकाशक : सनातन संस्कृति संघ (ट्रस्ट)
म. नं. 60, गली नं. 1-ए, शहीद भगत सिंह कालोनी
करावल नगर, दिल्ली - 110094
E-mail: sanatansanskritisangh@gmail.com
https://www.sanatansanskritisangh
.blogspot.com
दूरभाष : 9412458954, 8535004500



वैज्ञानिक यौवन रक्षक

सस्नेह उपहार

अमूल्य जानकारी देने वाली यह पुस्तक आपकी सेवा में हार्दिक शुभकामनाओं के साथ भेट की जा रही हैं। इसमें यौवन सुरक्षा से सम्बन्धित जो विवरण दिया गया हैं वो महर्षि पतंजलि के मनोविज्ञान पर आधारित हैं। इसमें यौवन का महत्व, यौन स्वास्थ्य, आरोग्य शास्त्र व दीर्घायु प्राप्ति के उपाय, काम ऊर्जा को परमात्म ऊर्जा में रूपान्तरित करने की विधि और जीवन जीने की कला का व्यावहारिक ज्ञान दिया गया हैं।

यह पुस्तक युवक- युवतियों की समझ को बढाती हैं और उनकी पुरानी अवांछनीय आदतों को दूर करती हैं। उन्हें शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ बनाकर स्वस्थ समाज का निर्माण करने में यह पुस्तक उत्तम सहायक सिद्ध होगी। इसे अवश्य पढना चाहिए। इसके स्वाध्याय से दिव्य प्रेरणा और प्रकाश की अनुभूति होगी।

युग क्रान्तिदर्शी श्री विश्वजीत सिंह अनंत जी ने जिस कल्याणकारी भावना को लेकर, किशोर और युवा युवक-युवतियों के लिए अत्यन्त उपयोगी इस पुस्तक की रचना की हैं उसी कल्याणकारी भावना के साथ यह पुस्तक आपकों सस्नेह समर्पित हैं। आप इस पुस्तक से स्वयं लाभ उठाएं और अपने परिचितों एवं मित्रों तक पहुँचाने की दिव्य सेवा करके पुण्य-लाभ अर्जित करें। यह मानवता की, राष्ट्र की, परमात्मा की सेवा मानी जाएगी। इसी कल्याणकारी शुभकामना के साथ-

....

....

....

....

....

को

यह अत्यन्त उपयोगी वैज्ञानिक यौवन रक्षक पुस्तक

सस्नेह भेट

भेटकर्ता का नाम एवं पता :

आत्म निवेदन

यौवन रक्षा भारतीय जीवन दर्शन का आधार हैं। भारतीय संस्कृति में विद्यार्थी जीवन का नाम ही यौवन रक्षा को प्रतिध्वनित करने वाला ब्रह्मचर्य हैं। मनुष्य जीवन की सबसे बड़ी सफलता उसके व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में हैं, सर्वांगीण व्यक्तित्व का विकास उसके विधार्थी काल के संस्कार और चरित्र निर्माण पर निर्भर करता हैं। यह उसके जीवन की आधार शिला (नींव) हैं। इस आयु में यौवन की रक्षा करने से मनुष्य का शारीरिक, मानसिक और आत्मिक आदि सभी प्रकार का विकास समुचित रूप से होता हैं। यौवन रक्षा ही आगे बढ़ने का, उन्नति करने का और महान बनने का मूल मन्त्र हैं।

हमारे देश का भविष्य हमारी युवा पीढी पर निर्भर हैं किन्तु उचित मार्गदर्शन के अभाव में वह आज दिशाहीन हो रही हैं। पाश्चात्य उपनिवेशिक संस्कृति की देन इस वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में जीवन के नैतिक-आध्यात्मिक मूल्यों के प्रति उदासीनता बरती गयी हैं, साथ ही भारत में लागू भेदभाव मूलक इंडियन संविधान में अनुच्छेद 30-ए लिखकर सनातन हिन्दू धर्म की धार्मिक शिक्षा विद्यालयों में दिए जाने को विधिवत प्रतिबंधित किया गया हैं, जबकि मुस्लिम, ईसाई जैसे पाप मूलक अधर्मी पंथ अपने विद्यालयों में अपनी साम्प्रदायिक शिक्षा देने को स्वतंत्र हैं, उन्हें संविधान में विशेषाधिकार दिया गया हैं। जिसके परिणाम स्वरुप आज के विद्यार्थियों का जीवन किशोरावस्था से ही विलासी और असंयमी हो जाता हैं।

वर्तमान समय के बालक ब्रह्मचर्य किस वस्तु का नाम हैं यह भी नहीं जानते, बल्कि दुर्भाग्यवश छोटे छोटे बालको में अनेक अवांछनीय आदते संक्रामक रोगों की तरह तीव्र गति से फैलती ही जा रही हैं। इन अवांछित आदतों से बालकों को बचने के लिए ही हमने इस पुस्तक का लेखन किया हैं। 12 से 32 वर्ष की आयुवर्ग के बालकों व युवाओं को यह पुस्तक अवश्य पढनी चाहिए। प्रत्येक माता-पिता का यह अनिवार्य कर्त्तव्य हैं कि वह अपनी संतान को कुटेवों से बचाने और यौवन रक्षा करने के लिए ब्रह्मचर्य की शिक्षा दें। शिक्षकों का भी कर्त्तव्य हैं कि वे अपने छात्रों के लिए ऐसी शिक्षा की पूरी सुविधा प्रस्तुत कर दें। अंग्रेजी में एक लोकोक्ति हैं-

When wealth is lost nothing is lost health is lost something is lost and when character is lost everything is lost.

धन गया तो कुछ नहीं गया, स्वास्थ गया तो कुछ गया और चरित्र गया तो सब कुछ चला गया। भारत के प्राचीन मनीषियों ने इस तथ्य को भलीभांति समझ लिया था और इसीलिए उन्होंने बालकपन से युवावस्था तक यौवन की रक्षा करने के लिए ब्रह्मचर्य पालन का विधान बनाया था।

ब्रह्मचर्य के बल पर ही महावीर हनुमान, मीरा, सुलभा, गार्गी, मैत्रेयी, सावित्री, दमयन्ती, लीलावती, भीष्म, विक्रमादित्य, शंकराचार्य, शिवाजी, स्वामी रामतीर्थ, महर्षि अरविन्द, महर्षि दयानन्द, स्वामी विवेकानंद, गोकुल सिंह, तक्षक, संत रविदास, हरबर्ट स्पेन्सर, वाल्टेयर, अल्बर्ट आइंस्टीन, नेपोलियन, गैरीबाल्डी, जॉन लबाक, केन्ट, मैडम ब्लावस्की, भीकाजी कामा, जॉन आफ आर्क, लोकमान्य तिलक आदि ने अपने को ऊँचा उठाया और दूसरों के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

वैज्ञानिक यौवन रक्षक - लेखक: विश्वजीत सिंह अनंत (युग क्रान्तिदर्शी)

प्रकाशक: सनातन संस्कृति संघ ट्रस्ट

यदि आप भारत को पुन: जगद्गुरू बनाना चाहते हैं, उसका खोया हुआ स्थान फिर से वापस दिलाना चाहते हैं, मानवता को पशुता में गिरने से बचाना चाहते हैं, इस देश के नागरिकों को एड्स (AIDS) जैसी घातक यौन बिमारियों से ग्रस्त होने से रोकना चाहते हैं, युवाओं का शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ बनायें रखना चाहते हैं, स्वस्थ समाज का निर्माण करना चाहते हैं, तो भ्रमित होती युवा पीढ़ी को यौवन रक्षा के लिए प्रेरित करों, उन्हें '**वैज्ञानिक यौवन रक्षक**' जैसी पुस्तके पढ़ायें।

भारत के स्वस्थ समाज का निर्माण संयमी व चरित्रवान युवाओं पर ही निर्भर करता हैं। युवाओं के यौवन की रक्षा के लिए उन्हें वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित यौवन का महत्त्व, यौवन स्वास्थ, आरोग्य शास्त्र व दीर्घायु प्राप्ति के उपाय, काम ऊर्जा को परमात्म ऊर्जा में रूपान्तरित करने की विधि और जीवन जीने की कला का ज्ञान दिया जाना हम अति आवश्यक हैं, इसकी अवहेलना करना हमारी संस्कृति, समाज और राष्ट्र के हित में नहीं हैं। यौवन रक्षा से ही सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण हो सकता हैं।

आशा हैं की यह पुस्तक संसार के प्रत्येक विद्यार्थी को यौवन रक्षा के लिए प्रेरित करेगी। उन्हें संयम का जीवन जीने के लिए उत्साह मिलेगा, जिससे कि उनका सर्वांगिक विकास होगा। उनमें शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बल की वृद्धि होगी। वह अपने जीवन में सुखी और आनंदित होगे।

सामाजिक सेवा कार्यों में व्यस्तता के चलते इस पुस्तक में त्रुटियों का रहना संभव हैं, इन त्रुटियों सहित आप सभीं पाठकों के जो भी सुझाव प्राप्त होगे, उन्हें आगामी संस्करण में सम्मलित किया जा सकेगा।

-विश्वजीत सिंह अनंत

(युग क्रान्तिदर्शी)

अनुक्रमणिका

द्वितीय खण्ड

व्यावहारिक योग साधना

परिशिष्ट

यौवन रक्षक ब्रह्मचर्य

जीवन का पहला आश्रम ब्रह्मचर्य हैं। ब्रह्मचर्य एक छोटा सा शब्द हैं परंतु इसका अर्थ बहुत व्यापक हैं। इसके अर्थ का सौवां भाग भी इस पुस्तक में नहीं लिखा जा सकता। ब्रह्म शब्द के मुख्य अर्थ हैं:- परमात्मा,

महान, ज्ञान और वीर्य। ब्रह्म के साथ चर्य शब्द जुड़ा हुआ हैं। चर्य का अर्थ हैं:- विचरना। अत: ब्रह्मचर्य का अर्थ हुआ इन्द्रिय संयम पूर्वक ज्ञान को प्राप्त करते हुए परमात्मा में विचरना, महान बनना। अपने को महान बनाने के पथ पर ले जाना- अपनी जीवनी शक्ति का संग्रह करना, उन्हें बिखरने न देना, उन्हें अपनी उन्नति में लगाना ब्रह्मचर्य का व्यापक अर्थ हैं।

ब्रह्मचर्य अर्थात ब्रह्म जैसा जीवन, परमात्मा जैसा अनुभव उपलब्ध हो जाना। और वह हो सकता हैं अपनी शक्तियों को समझकर रूपान्तरित करने से। काम ऊर्जा को समझना हैं ताकि ब्रह्मचर्य फलित हो सके। काम ऊर्जा को जानना हैं ताकि हम काम से मुक्त हो सकें और हमारी काम ऊर्जा- परमात्म ऊर्जा में रूपान्तरित होकर ऊपर उठ सकें। और उस अनुभव को पाने के सुगम उपाय हैं- इन्द्रिय संयम, ध्यान, भक्ति, प्रेम और योग।

प्राचीन काल में शिष्य गुरु के पास ब्रह्म प्राप्ति के लिए वेदों का अध्ययन करते हुए सावधानी से वीर्य रक्षा करते थे। अतएव धीरे-धीरे 'ब्रह्मचर्य' का अर्थ केवल वीर्य रक्षा ही निकाला जाने लगा और आधुनिक युग में आठों प्रकार के मैथुन- स्मरण, श्रवण, कीर्तन, प्रेक्षण, केलि, शृंगार, गुह्यभाषण और स्पर्श—का त्याग ही ब्रह्मचर्य के नाम से पुकारा जाता है, परमपद को प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन अति आवश्यक है:—

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदंसंग्रहेण प्रवक्ष्ये॥

वेद के जानने वाले विद्वान जिस सच्चिदानन्दघनरूप परमपद को ॐकार नाम से कहते हैं और आसक्ति रहित यत्नशील महात्मा जन जिसमें प्रवेश करते हैं तथा जिस परमपद को चाहने वाले ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं उस परमपद को तेरे लिए मैं कहूँगा।'

कठोपनिषद् में ब्रह्मचर्य को परमात्मा प्राप्ति का साधन इस प्रकार बताया है:—

सर्वे वेदा यत्पदयाभवन्ति तयाँ सि सर्वणि च यद्धदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदँ संग्रहेणा ब्रवीम्योमित्येतत्॥

"सारे वेद जिस पद का वर्णन करते हैं, संपूर्णतयों को जिसकी प्राप्ति का साधन बतलाते हैं तथा जिसकी इच्छा रखने वाले ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं, उस पद को मैं तुम से संक्षेप से बताता हूँ; ॐ यही वह पद है।'

इन्द्रिय संयम पूर्वक जीवन ऊर्जा की रक्षा करने वाले मनुष्य के हृदय में महानता का भाव स्वयं स्थित हो जाता हैं। उसके जीवन में एक क्रांति घटित हो जाती हैं, एक नया द्वार खुल जाता हैं। उसकी काम ऊर्जा- परमात्म ऊर्जा में रूपान्तरित होने लगती हैं। इसलिए ब्रह्मचर्य के व्यापक अर्थ के होते हुए भी इस शब्द का वीर्य रक्षा के संकुचित अर्थ में प्रयोग किया जाता हैं। आज हमारे संकुचित विचारों वाले, उत्साह-हीन, जीवन-हीन, निराश समाज को संभवत: इसी की सबसे अधिक आवश्यकता हैं। वीर्य रक्षा करों, क्योंकि वीर्य रक्षा करना ब्रह्मचर्य जीवन का पहला कदम हैं।

वीर्य रक्षा को जननेंद्रिय मात्र तक सीमित रखना भारी भूल हैं। मन को विकार पूर्ण रहने देकर शरीर को दबाने का प्रयास करना हानिकारक हैं। जहाँ मन है, वहां अंततः शरीर को भी घसीटे बिना नहीं रहता। काम (Sex) पर पूर्ण संयम तभी संभव है जब जननेंद्रिय के साथ- साथ अन्य इन्द्रियों का भी संयम किया जाये, मन और इन्द्रियों को वश में रखा जायें। ब्रह्मचर्य तो यह हैं कि-

"भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्रा:।"

कानों से भद्र श्रवण करें, आँखों से सदा भद्र देखें, जीभ से शरीर को स्वास्थ एवं बलवान बनाने वाले पदार्थों का ही सेवन करें, नाक से दिव्य गंध लें, हाथों से कामोत्तेजक वस्तुओं को न छुएँ, पैरों से कुकर्म करने के स्थान पर न जायें, मन से कामुक विषयों का चिंतन भी न करें। तात्पर्य यह है कि मन और इन्द्रियों के संयम का नाम यथार्थ ब्रह्मचर्य हैं।

ब्रहमचर्य अमृत का पथ

"अमृतस्य पुत्रोवयम्।"

हम अमृत की संतान हैं। अमृत से ही हमारा जन्म हुआ हैं। अमृत ही हमारा यथार्थ स्वरूप हैं। हमें अपनी अन्तश्चेतना को जाग्रत करके अपने अमृत स्वरूप को पहचानना चाहियें। ब्रह्मचर्य का पालन ही मृत्यु के भय से मुक्त कर अमृतत्व प्रदान करने में समर्थ हैं। श्रुति कहती हैं-

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत।"

ब्रह्मचर्य रूपी तप से देवताओं ने मृत्यु को जीत लिया हैं। इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वे कभी मरेगे ही नहीं, मरेगे तो अवश्य ही पर अकाल मृत्यु को हटाकर दीर्घ जीवन को प्राप्त कर सकते हैं और शक्ति, साहस और वीरता का ऐसा उदाहरण उपस्थित कर सकते है जिसे देखकर संसार चकित रह जायें। ब्रह्मचर्य का पालन करने से शरीर में एक अद्भूत आकर्षण शक्ति उत्पन्न होती हैं, जिसे 'ओज' कहते हैं। ब्रह्मचर्य का पालन करने से चेहरे पर तेज, वाणी में ओज, कार्य में उत्साह व स्फूर्ति आती हैं। श्रुति कहती हैं-

"हे मनुष्य ! उन्नति कर, अवनति मत कर ! इसी के लिए तुझे जीवन और बल प्रदान करता हूँ ! तेरा यह उतम शरीर रूपी रथ हैं, जो अजृतत्व- अमृतत्त्व प्रदायक हैं। इसमें रहते हुए ही अमृतत्त्व प्राप्त कर तथा अभ्युदय का अनुभव हो जाने पर दूसरों को भी मार्ग दिखा।"

अपने पूर्वजों की ओर तो दृष्टि डालिए वे कितनी आयु प्राप्त करते थे, पर ऐसा क्यों? यदि वह हजारों वर्ष जीवित रहते थे तो क्या हम पूरे 100 वर्ष भी सुख पूर्वक नहीं जी सकते? हम भी उनकी तरह ही दीर्घजीवी हो सकते हैं परन्तु इसके लिए हमको भी उनकी तरह ही संयम और साधना की आवश्यकता है। भगवान शंकर कहते हैं-

"हे पार्वती ! इस ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही मेरी ऐसी महान महिमा हुई हैं।" ब्रह्मचर्य की महिमा अपार हैं। इस ब्रह्मचर्य के बल पर ही अकेले हनुमान जी ने लंका में घुसकर उसके शक्तिशाली पुत्र मेघनाथ की

उपस्थिति में हजारों राक्षसों पर विजय प्राप्त की थी और इसी ब्रह्मचर्य की सामर्थ्य पर लक्ष्मण जी इन्द्रजीत का वध कर सके थे। वीरवर भीष्म की जो इतनी महिमा है वह उनके अखंड ब्रह्मचर्य पालन का ही फल है। इसी ब्रह्मचर्य के पालन के कारण उनका नाम भीष्म पड़ा। इसी व्रत के प्रभाव से महाप्रतापी परशुराम भी उन पर विजय प्राप्त करने में असमर्थ नहीं हुए। और तो और स्वयं भगवान श्री कृष्ण को भी भीष्म के सामने अपनी प्रतिज्ञा को तोड़कर महाभारत के युद्ध में शस्त्र ग्रहण करने पड़े। भीष्म ने अपनी इच्छा से ही मृत्यु का दिन व समय निश्चित किया। धन्य है ऐसा ब्रह्मचर्य।

आधुनिक काल में भी सैकड़ों ऐसे महापुरुष हुए हैं जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ब्रह्मचर्य पालन में ही व्यतीत किया। आदि शंकराचार्य ने ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही पाखण्ड का खंडन करके सनातन धर्म का पुनरुद्धार किया था। महर्षि दयानंद सरस्वती ने ब्रह्मचर्य के बल पर ही आर्य समाज की स्थापना करके वैदिक धर्म को नष्ट होने से बचाया। परमहंस रामकृष्ण देव और माँ शारदा का जीवन तो ब्रह्मचर्य का उत्कृष्ट उदाहरण हैं। स्वास्थ, सबल व पूर्ण जवानी के दिनों में परमहंस रामकृष्ण देव और माँ शारदा एक साथ रहें, परन्तु दोनों के मन में क्षण मात्र के लिए भी वासना का उदय नहीं हुआ। उन्हीं के शिष्य स्वामी विवेकानंद ब्रह्मचर्य के प्रताप से विदेशों तक में वैदिक धर्म का ध्वज फैरा पायें। ब्रह्मचर्य की शक्ति के कारण ही ब्रिटिश शासन के मध्य गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स को संत आनंद भारती के चरणों में गिरकर अपने प्राणों की भीख मांगनी पड़ी। ब्रह्मचर्य के कारण ही चंद्रशेखर आजाद का इतना नाम हैं।

चंद्रशेखर आजाद अखंड ब्रह्मचारी थे। उनकों कई नव यौवनाओं ने अपने सौन्दर्य जाल में फांसने का प्रयास किया, परन्तु राष्ट्र के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने वाले 'आजाद' को वे फांस न सकी। वीर्यवान आजाद ने कहा था कि मेरे जीते जी अंग्रेज मुझे गिरफ्तार करना तो दूर, मेरे शरीर को स्पर्श भी न कर पायेगे। अल्फ्रेड पार्क में आजाद को जब अंग्रेजों ने घेर लिया तो उन्होंने अकेले ही उनसे एक घंटे तक संघर्ष किया और अंत में रिवाल्वर की अंतिम गोली स्वयं को मार ली। उन्होंने अपना कथन पूरा किया। आजाद के जीते जी अंग्रेज उनके शरीर को स्पर्श भी न कर सके। ऐसे संयमी, सदाचारी, देशभक्तों के बलिदान से ही भारत स्वतंत्र हो पाया।

आज उसी भारत पर पुन: संकट छा रहा हैं। अश्लील सिनेमा, साहित्य, साइबर कैफे आदि के माध्यम से और विकृत सेक्स शिक्षा के नाम पर युवाओं के चरित्र को नष्ट करने का भयानक कुचक्र रचा जा रहा हैं। हे भारत के आधार युवाओं ! सावधान ! आप अपने जीवन को इस कुचक्र (षडयंत्र) का शिकार न होने देना। याद रखों ब्रह्मचर्य ही परम बल हैं। ब्रह्मचर्य का पालन किसी भी आयु से प्रारंभ किया जा सकता हैं। जिन्होंने अपने वीर्य का नाश नहीं किया हैं, वे ब्रह्मचर्य का पालन करें, और जो मनुष्य अपने वीर्य का अत्याधिक नाश कर चुके हैं, वे भी ब्रह्मचर्य का पालन करके इसके लाभों को प्रत्यक्ष देखें।

ब्रह्मचर्य सारी सफलताओं की महान कुंजी है। ब्रह्मचर्य के पालन करने से शरीर में बल, स्फूर्ति आदि की वृद्धि होती है, बुद्धि सूक्ष्म और तेजस्वी होती है, प्रज्ञा निखरती है, शरीर में ओज-तेज का विकास होता है। इससे व्यक्तित्व निर्भीक बनता है। सात्विक भावों की वृद्धि होती है- क्षमा, दया, वीरता, शाँति, सहानुभूति, अहिंसा, प्रेम, सत्य आदि सदैव ही पूर्ण रूप से विद्यमान रहते हैं।

आज ही संकल्प लो कि आज तक जो हो गया सो हो गया, जो बीत गया सो बीत गया, आज के बाद आगे से तो क्या अभी से ब्रह्मचर्य व्रत को नष्ट करने वाला कोई भी अवांछित (गलत) कार्य नहीं करेगे।

"वैज्ञानिक यौवन रक्षक" पुस्तक को पढकर, आचरण में लाकर अपने जीवन को ओजस्वी, तेजस्वी बनाकर आनन्दित होते हुए अमृतत्व को प्राप्त करों। साथ ही दूसरों को भी यौवन रक्षा के लिए प्रोत्साहित करों। यह पुस्तक पांच बार अवश्य पढ़े- पढाये। स्मरण रखिये ब्रह्मचर्य अमृत का पथ हैं। अमरता का अधिकार संयमी व चरित्रवानों के लिए ही हैं। असंयमी, शक्तिहीन मनुष्य वहां पर नहीं जा सकते। युवाओं के चरित्र की रक्षा के सनातन संस्कृति संघ द्वारा "चरित्र निर्माण अभियान" चलाया जा रहा हैं। आप भी इस अभियान से जुड़कर तथा वैज्ञानिक यौवन रक्षक पुस्तक को राष्ट्र के कर्णधारों किशोर छात्र- छात्राओं व युवाओं तक पहुँचाकर सुदृढ़ भारत के निर्माण में सहभागी बन सकते हैं।

आधुनिक चिकित्सकों की दृष्टि में ब्रह्मचर्य

आज कल के अविवेकी मनोचिकित्सक और यौन विज्ञान के अल्पबुद्धि ज्ञाता जो पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक डॉ. सिग्मंड फ्रायड के सिद्धांतों पर चलकर समाज को अनैतिकता, मुक्त साहचर्य (Free Sex) और अनियंत्रित विकारी सुख भोगने का उपदेश देते हैं, उनको जानना चाहिए कि डॉ. सिग्मंड फ्रायड स्वयं कई शारीरिक और मानसिक रोगों से ग्रस्त था। 'कोकीन' नाम की नशीली दवा का वो व्यसनी भी था। इस व्यसन के प्रभाव में आकर उसने जो कुछ लिख दिया उसे पाश्चात्य जगत ने स्वीकार कर लिया और इसके फलस्वरूप आज तक वे शारीरिक और मानसिक रोगियों की संख्या बढ़ाते जा रहे हैं। अब पश्चिम के मनोवैज्ञानिकों ने फ्रायड की गलती को स्वीकार किया है और एडलर एवं कार्ल गुस्ताव जुंग जैसे प्रखर मनोवैज्ञानिक ने फ्रायड की कड़ी आलोचना की है। फिर भी इस देश के मनोचिकित्सक और सेक्सोलोजिस्ट कई बार हमारे युवा वर्ग को फ्रायड के सिद्धान्तों पर आधारित उपदेश देकर गुमराह कर रहे हैं। कुछ लोग समझते हैं कि: 'ब्रह्मचर्य को वैज्ञानिक समर्थन प्राप्त नहीं है...... यह केवल हमारे शास्त्रों के द्वारा ही प्रमाणित है......' पर ऐसी बात नहीं है। वास्तव में या तो लोगों को गुमराह करने वाले लोग फ्रायड के अंधे अनुयायी हैं, या तो वे इस देश में भी पाश्चात्य देशों की भाति पागलों की और यौन रोगियों की संख्या बढ़ाना चाहते हैं जिससे उनको पर्याप्त मरीज मिलते रहें और उनका धंधा चलता रहे।

आज के बड़े-बड़े डॉक्टर और मनोवैज्ञानिक भारत के ऋषि-मुनियों के ब्रह्मचर्य विषयक विचारधारा का, उनकी खोज का समर्थन करते हैं। डॉ. ई. पैरियर का कहना है: "यह एक अत्यन्त झूठा विचार है कि पूर्ण ब्रह्मचर्य से हानि होती है। नवयुवकों के शरीर, चरित्र और बुद्धि का रक्षक रखना सबसे अच्छी बात ही है।"

ब्रिटिश सम्राट के चिकित्सक सर जेम्स पेजन लिखते हैं- "ब्रह्मचर्य से शरीर और आत्मा को कोई हानि नहीं पहुँचती। अपने को नियंत्रण में रखना सबसे अच्छी बात है।"

वीर्यरक्षा से कितने लाभ होते हैं यह बताते हुए डॉ. मोलविल कीथ (एम.डी.) कहते हैं- "वीर्य तुम्हारी हड्डियों का सार, मस्तिष्क का भोजन, जोड़ों का तेल और श्वास का माधुर्य है। यदि तुम मनुष्य हो तो उसका एक बिन्दु भी नष्ट मत करो जब तक कि तुम पूरे 30 वर्ष के न हो जाओ और तभी भी केवल संतान उत्पन्न

करने के लिए। उस समय स्वर्ग के प्राणधारियों में से कोई दिव्यात्मा तुम्हारे घर में आकर जन्म लेगी, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।"

ब्रह्मचर्य से कितने लाभ होते हैं यह बताते हुए डॉ. मोन्टेगाजा कहते हैं- "सभी मनुष्य, विशेषकर नवयुवक, ब्रह्मचर्य के लाभें का तत्काल अनुभव कर सकते है। स्मृति की स्थिरता और धारण एवं ग्रहण शक्ति बढ़ जाती है। बुद्धिशक्ति तीव्र हो जाती है, इच्छाशक्ति बलवती हो जाती है। सच्चारित्र्य से सभी अंगों में एक ऐसी शक्ति आ जाती है कि विलासी लोग जिसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। ब्रह्मचर्य से हमें परिस्थितियाँ एक विशेष आनंददायक रंग में रँगी हुई प्रतीत होती हैं।

ब्रह्मचर्य अपने तेज-ओज से संसार के प्रत्येक पदार्थ को आलोकित कर देता है और हमें कभी न समाप्त होने वाले विशुद्ध एवं निर्मल आनन्द की अवस्था में ले जाता है, ऐसा आनंद जो कभी नहीं घटता।"

डॉ. केलाग महोदय लिखते हैं- "मेरी सम्मति में मानव-समाज को प्लेग, चेचक तथा इस प्रकार की अन्य व्याधियों एवं युद्ध से इतनी हानि नहीं पहुँचती जितनी हस्तमैथुन तथा इस प्रकार के अन्य घृणित महापातकों से पहुँचती है। सभ्य समाज को नष्ट करने वाला यह एक घुन है, जो अपना घातक कार्य लगातार करता रहता है और धीरे-धीरे स्वास्थ्य, सदगुण और साहस को समूल नष्ट कर देता है।"

डॉ. क्राफट एर्विंग ने लिखा है: "यह कली की सुंदरता एवं महक को नष्ट कर देता है जिसे पूर्ण फूल एवं पवित्र होने पर ही खिलना चाहिए परंतु ये कुण्ठित बुद्धिवाले इन्द्रिय-तृप्ति के लिए महान भूल करते हैं... इससे नैतिकता, स्वास्थ्य, चिन्तनशक्ति, चारित्र्य एवं कल्पनाशक्ति तथा जीवन की अनुभूति नष्ट हो जाती है।"

यूरोप के प्रतिष्ठित चिकित्सक भी भारतीय योगियों के कथन का समर्थन करते है। डॉ. निकोलस कहते हैं- "यह एक भैषजिक और दैहिक तथ्य है कि शरीर के सर्वोतम रक्त से स्त्री तथा पुरुष दोनों ही जातियों में प्रजनन तत्त्व बनते हैं। शुद्ध तथा व्यवस्थित जीवन में यह तत्त्व पुनः अवशोषित हो जाता है। यह सूक्ष्मतम मस्तिष्क, स्नायु तथा मांसपेशीय उत्तकों (Tissues-कोशों) का निर्माण करने के लिए तैयार होकर पुनः परिसंचारण में जाता है। मनुष्य का यह वीर्य वापस ले जाने तथा उसके शरीर में विसारितत होने पर उस व्यक्ति को निर्भीक, बलवान, साहसी तथा वीर बनाता है। यदि इसका अपव्यय किया गया तो यह उसको स्त्रैण, दुर्बल तथा कृशकलेवर, कामोत्तेजनशील तथा उसके शरीर के अंगों के कार्यव्यापार को विकृत तथा स्नायुतंत्र को शिथिल (दुर्बल) करता है तथा उसे मिर्गी (मृगी) एवं अन्य अनेक रोगों और शीघ्र मृत्यु का शिकार बना देता है। जननेन्द्रिय के व्यवहार की निवृत्ति से शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक बल में असाधारण वृद्धि होती है।"

परम धीर तथा अध्यवसयायी वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चला है कि जब कभी भी रेतःस्राव को सुरक्षित रखा जाता तथा इस प्रकार शरीर में उसका पुनरवशोषण किया जाता है तो वह रक्त को समृद्ध तथा मस्तिष्क को बलवान बनाता है।

डॉ. डिओ लुई कहते हैं- "शारीरिक बल, मानसिक, ओज तथा बौद्धिक कुशाग्रता के लिए इस वीर्य का संरक्षण परम आवश्यक है।"

डॉ. ई.पी.मिलर लिखते हैं- "शुक्रस्राव का स्वैच्छिक अथवा अनैच्छिक अपव्यय जीवनशक्ति का प्रत्यक्ष अपव्यय है। यह प्रायः सभी स्वीकार करते हैं कि रक्त के सर्वोतम तत्त्व शुक्रस्राव की संरचना में प्रवेश कर जाते हैं। यदि यह निष्कर्ष ठीक है तो इसका अर्थ यह हुआ कि व्यक्ति के कल्याण के लिए जीवन में ब्रह्मचर्य परम आवश्यक है।"

हमारे ऋषि-मुनियें ने तो हजारों वर्ष पहले वीर्यरक्षा और संयम से दिव्य आत्मा को अवतरित करने की बात बताई है, लेकिन पाश्चात्य बुद्धिजीवियों से प्रभावित हमारे देश के शिक्षित लोग उन महापुरुषों के वचनों को मानते नहीं थे। अब पाश्चात्य चिकित्सकों की बात मानकर भी यदि वे संयम के रास्ते चल पड़ेंगे तो हमें प्रसन्नता होगी। हिन्दू धर्मशास्त्रों के उपदेशों को विधर्मी एवं नास्तिक लोग स्वीकार न करें यह संभव है, पर अब जबकि उन्ही बातों को विज्ञानी मान रहे हैं और अपनी भाषा से ब्रह्मचर्य की आवश्यकता बता रहे हैं, वैज्ञानिक स्वीकृति मिल रही है, तब उसका स्वीकार सबको करना ही पड़ेगा और सीधे नहीं तो अनसीधे ढंग से भी उनक भारतीय संस्कृति की शरण में आना ही पड़ेगा। इसी मे उनका कल्याण निहित है।

यौवनारम्भ में पीनियल ग्रन्थि की भूमिका

पीनियल ग्रन्थि (Pineal Gland) भ्रूमध्य में स्थित एक छोटी सी किन्तु अत्याधिक महत्वपूर्ण ग्रंथि हैं। योग में इस ग्रंथि का सम्बन्ध आज्ञा चक्र से हैं। योग में यह ग्रंथि तृतीय नेत्र (Therd Eye) के रूप में जानी जाती हैं। यह ग्रन्थि मस्तिष्क को नियंत्रित एवं व्यवस्थित रखने वाली हैं। लाखों वर्ष पूर्व मानव मस्तिष्क के विकास में पीनियल ग्रन्थि की अति सक्रिय भूमिका रही हैं। अत: उस समय के लोगों की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक क्षमता अत्याधिक थी। भावनाओं पर उनका नियन्त्रण अधिक था। कालांतर में यह ग्रन्थि ह्रास को प्राप्त हुई। आज अवशेष के रूप में यह एक लघु ग्रंथि हैं। यदि इसकी रक्षा का समुचित प्रबंध नहीं हुआ तो यह सदैव के लिए पूर्णत: नष्ट हो जाएगी।

बच्चों में यह पीनियल ग्रंथि बहुत क्रियाशील होती हैं। सात वर्ष की आयु तक बच्चों में जो मानसिक प्रारूप बन जाते हैं, वही प्रारूप जीवन-भर बने रहते हैं। बच्चों में आठ से नौ वर्ष की आयु प्राप्त होते ही पीनियल ग्रंथि का क्षय होना प्रारंभ हो जाता हैं। जिसके फलस्वरूप 12 से 14 वर्ष के बच्चों में 'यौवनारम्भ' (Puberty) होने लगता हैं तथा बच्चें किशोर अवस्था में प्रवेश प्राप्त करते हैं।

जब पीनियल ग्रन्थि का क्षय होता है तो पिच्यूटरी ग्रन्थि (पीयूष ग्रन्थि) सक्रिय हो जाती हैं। पिच्यूटरी ग्रन्थि शीघ्र सकिय हो जाने से बच्चों में यौन विकास अपेक्षाकृत तेजी से होने लगता हैं तथा शारीरिक पक्ष मानसिक पक्ष की अपेक्षा अधिक बलवान हो जाता हैं। इन परिवर्तनों का परिपक्व ढंग से विश्लेष्ण करके उनका मुकाबला कर पाने में किशोर मन अक्षम रहता हैं। इसके परिणाम स्वरूप भावनात्मक आघात तथा व्यक्तित्व में उलझन पैदा हो जाती हैं और किशोर न करने जैसे काम कर बैठता हैं। पिच्यूटरी ग्रन्थि को नियंत्रित रखने के लिए पीनियल ग्रन्थि का विकास करना अत्यंत आवश्यक हैं।

ध्यान व योग के अभ्यास द्वारा पीनियल ग्रन्थि का क्षय रोका जाना संभव हैं। पीनियल ग्रन्थि पिच्यूटरी ग्रन्थि से निकलने वाले हार्मोन्स को नियंत्रित करती हैं। जिससे यौन विकास कुछ वर्षो के लिए रुक जाता हैं।

भावनात्मक और शारीरिक विकास के साथ- साथ होने से शारीरिक परिपक्वता अनियंत्रित नहीं होने पाती। शारीरिक और मानसिक ऊर्जा में संतुलन बना रहता हैं।

पीनियल ग्रन्थि के क्षय की गति को कम करने में सहायक क्रियाएं हैं:-

1. ध्यान
2. अनुलोम-विलोम प्राणायाम
3. ऊर्जायी प्राणायाम
4. सूर्य नमस्कार
5. योग मुद्रा
6. शशांकासन
7. मंडूकासन
8. पश्चिमोत्तानासन
9. सर्वांगासन
10. ताड़ासन
11. गायत्री मन्त्र का जप ।

बालक/बालिकाओं का किशोर अवस्था में प्रवेश

किशोर अवस्था में बच्चों का शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होता हैं। किशोरावस्था के परिवर्तन लड़कियों में 11-12 वर्ष की आयु तथा लड़कों में औसतन 12-14 वर्ष की आयु में आरंभ होकर व्यस्क होने तक होते रहते हैं। किशोरों में बदलाव मुख्यतः प्रजनन हार्मोन्स के स्राव के प्रभाव के कारण होते हैं। जब बच्चे किशोरावस्था की आयु में पहुँच जाए तब अन्य विषयों की शिक्षा की भांति उन्हें स्वास्थ रक्षक यौवन शिक्षा देनी चाहिए, ताकि उस विषय में उनका जिज्ञासु व कोमल मन गलत तरीकों एवं गलत साधनों व व्यक्तियों के चंगुल में फंसकर भ्रम व भटकाव का शिकार न बन जाए। यह विषय लडक़ों के लिए जितना अनिवार्य है, उतना ही अनिवार्य और महत्वपूर्ण लड़कियों के लिए भी है। क्योंकि दोनों ही ज्ञान, पवित्रता व उत्कृष्ट चरित्र के समान अधिकारी है तथा श्रेष्ठ समाज व परिवार निर्माण की जिम्मेदारी भी दोनों पर समान रूप से है।

बहनों में यौवनारम्भ

संसार में परमात्मा ने नर और नारी की रचना की है। आदिकाल से ही सुगढ़ समाज के निर्माण में नारियों की भूमिका रही है। श्रेष्ठ व्यक्ति, श्रेष्ठ परिवार व समाज के निर्माण हेतु प्रकृति ने नारी को महत्वपूर्ण जिम्मेदारी दी है। परन्तु यह जिम्मेदारी वह तभी पूरा कर सकती है जब वह स्वयं स्वस्थ्य हो, पवित्र विचार वाली सुसंस्कृत हो।

जन्म से लेकर किशोर अवस्था तक, जब तक बालिका ऋतुमति न हो बालक और बालिका के शरीर और स्वास्थ्य की स्थिति एक जैसी रहती हैं। भारत उष्ण देश हैं। इसीलिए हमारे देश में किशोरी बालिका कम आयु में ऋतुमति हो जाती हैं, अर्थात उसे मासिक रज:स्राव होना शुरू हो जाता हैं। लड़कियों में यौवनारम्भ की आयु 10 वर्ष से 16 वर्ष होती हैं। इस आयु में 'पिच्यूटरी ग्रन्थि' से स्रावित एफ.एस.एच. (F.S.H.) एस. एच. (S.H.) हार्मोन्स के प्रभाव से अंडाशय का आकार बढ़ता हैं तथा वे एस्ट्रोजन और प्रोजेस्ट्रान हार्मोन्स स्रावित करने लगते हैं। जिसके प्रभाव से बालिका के यौन अंगों में परिवर्तन होने लगता हैं। किसी लड़की में यह जल्दी सक्रिय हो जाता है, तो किसी में विलम्ब से सक्रिय होता हैं। किशोर अवस्था के शुरू होते ही स्तनों व नितंबों

में उभार तथा शरीर सुडौल बनने लगता हैं। आवाज में पतलापन आता हैं। चेहरे पर मुहांसे निकलने लगते हैं। जननांग और बगलों में बाल के उगने जैसे शारीरिक लक्षण बाहरी रूप से प्रकट होते हैं। उसके पश्चात मासिक धर्म शुरू हो होता हैं।

मासिक धर्म में लड़की के जननांग से रक्त जैसा लाल रंग का स्राव निकलना शुरू हो जाता हैं। यह वास्तव में शुद्ध रक्त नहीं होता बल्कि इसे रज कहते हैं। पहली बार रज निकलना या रज:स्राव होना रजोदर्शन कहलाता हैं। जो 3 से 5 दिन तक निकलता हैं, फिर अपने आप बंद हो जाता हैं। पूरे पीरियड में लगभग 50 ml से 60 ml रज:स्राव निकलता हैं। इसके 28 से 30 दिन अर्थात एक महीने बाद फिर रज:स्राव होता हैं। इसी तरह से यह 55-60 वर्ष की आयु होने तक प्रत्येक महीने होता रहता हैं। प्रत्येक महिने होने के कारण रज:स्राव को महावारी या मासिक धर्म के नाम से पुकारा जाता हैं। मासिक रज:स्राव प्रारंभिक एक-दो वर्ष तक अनियमित होता हैं तथा दर्द भी हो सकता हैं, पर कुछ समय पश्चात धीरे-धीरे यह नियमित होने लगता हैं। मासिक धर्म स्वाभाविक क्रिया हैं। इसमें भय, लज्जा, या झिझक करने की आवश्यकता नहीं हैं। सामान्य रूप से दैनिक कार्य करते रहना चाहिए।

यौवन काल में कुछ समस्याएँ होती हैं जैसे- मासिक धर्म की अनियमितता, मासिक धर्म से पहले या उसी अवधि में कमर, पेडू आदि में अत्यधिक दर्द होना आदि। ऐसे समय में वे एलोपैथी दवाएँ लेकर तत्काल राहत पाना चाहती हैं, जो कि बहुत खतरनाक दुष्परिणाम पैदा करती है।

लगभग तीन चौथाई किशोरियों में मासिक धर्म की सम्भावित तिथि के 7 से 10 दिन पूर्व ही भावनात्मक, मानसिक परिवर्तन होते हैं, उनका व्यवहार बदल जाता हैं। यह परिवर्तन मानसिक तनाव, हार्मोन्स के बढ़ते स्तर और शरीर में द्रव जमा हो जाने से हो सकता हैं। इन समस्याओं से बचाव हेतु एक सप्ताह पूर्व से ही नमक का सेवन कम कर दें तथा मानसिक संतुलन बनाये रखें। यदि रजोदर्शन 9 वर्ष की आयु से पूर्व शुरू हो या 16 वर्ष की आयु तक नहीं होता हैं, मासिक धर्म जल्दी-जल्दी होता हैं, देर से होता हैं या अधिक दर्द होता हैं, तो इन सभी समस्याओं में बिना लज्जा, झिझक महिला चिकित्सक से विमर्श लें, जाँच कराएं। मासिक धर्म के मध्य स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

इस विषय में ध्यान देने योग्य कुछ बिन्दु है-

1. मासिक धर्म काई छूत का रोग नहीं है। यह स्त्री का प्रकृतिगत धर्म हैं, स्वाभावित क्रिया है, जिससे शरीर की सफाई होती है। अत: मासिक धर्म को लेकर लड़कियाँ हीनता ही भाव न लाएँ और न ही परिवार में अन्य सदस्य उनसे हीनतापूर्ण छूआछूत का व्यवहार करें।

2. इस अवधि में शरीर को आराम चाहिए अत: अतिश्रम से बचें। सर्दी गर्मी से बचें। पूजा पाठ सम्बन्धी नियमों का पालन के क्रम में इतना ही पर्याप्त है कि स्थूल पूजा सामग्री को न छूएँ। मानसिक जप, ध्यान, मन्त्रलेखन से कोई परहेज करने की आवश्यकता नहीं है।

3. मासिक धर्म की अवधि में दर्द होने पर एलोपैथी दवा न लें। योग्य विशेषज्ञ से सलाह लेकर आयुर्वेदिक या होमियोपैथी दवा ले सकते हैं। पेडू व पेट में गरम पानी की थैली या बोतल से सेंक करें, ठंडी खट्टी चींजे न खाएँ। गरम पेय, गरम भोजन लें। मिर्च मसालेदार भोजन न लें।

4. मासिक धर्म की अवधि में वस्त्रों की सफाई का पर्याप्त ध्यान रखें। शुद्ध सूती वस्त्र या मेडिकल के पैड इस्तेमाल करें। यदि कॉटन कपड़ा इस्तेमाल करते हों तो एक कपड़े को छ: बार से अधिक इस्तेमाल न करें। कपड़े को अच्छी तरह साबुन से धोकर धूप में सुखाएँ तथा कीटाणु रहित स्वच्छ स्थान में रखें। ग्रामीण क्षेत्रों की बहनें विशेष रूप से ध्यान रखें।

5. पूजा-पाठ अनुष्ठान के कारण कभी भी मासिक धर्म के समय को आगे बढ़ाने तथा उसके लिए दवाएँ लेने की गलती न करें। प्रकृति की स्वाभाविक क्रिया में दखल न दें।

6. उत्तेजक खान-पान, राक्षसी आहार-मांसाहार, टी.वी. के उत्तेजक दृश्य, अश्लील साहित्य तथा अश्लील यौन संबंधी चर्चा से मासिक धर्म संबंधी तकलीफें अधिक बढ़ जाती है।

7. मासिक धर्म संबंधी तकलीफों व अनियमितताओं के लिए मेंहदी बीज (सूखी) का पाउडर बना लें। एक-एक चम्मच सबेरे शाम आधा कप पानी में 6-8 घण्टे के लिए भिगा दें। सबेरे भिगाया हुआ शाम को एवं शाम को भिगाया हुआ सबेरे के समय खाली पेट लें। ऐसा दो-तीन महिने लगातार देते रह सकते हैं।

8. काले तिल एक पाव, 3 लीटर पानी में मिलाकर उबालें। डेढ़ गिलास बच जाए तो 3 खुराक बनाकर खाली पेट प्रात: सायं लें। यह क्रिया माह में एक बार करें। अशोक की छाल का काढा भी फायदेमंद होता है।

9. नियमित रूप से रस्सी कूद, चक्की आसन, तितली आसन, पश्चिमोतासन, सूर्य नमस्कार तथा अनुलोम-विलोम प्राणायाम करें। रस्सी कूदना किशोर आयु की लड़कियों ले लिए सर्वोतम व्यायाम हैं।

10. ब्रह्मचर्य का सख्ती से पालन करें।

भाइयों में यौवनारम्भ

भाईयो! ब्रह्मचर्य एवं यौवनारम्भ के बारे में आपको यहाँ से जो जानकारी दी जाएगी उससे आपके बहुत से भ्रम भी दूर होंगे। यह विषय इतना अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, कि इसकी सही जानकारी के बिना मनुष्य का जीवन भटकाव भरा और शक्तिहीन हो जाता है। पुरातनकाल में हमारे गुरुकुल शिक्षा पद्धति में ब्रह्मचर्य अनिवार्य हुआ करता था। जिसका परिणाम था कि भारत हर क्षेत्र में शक्ति सम्पन्न रहा। यहाँ वीर योद्धा, ज्ञानी, तपस्वी व ऋषि स्तर के लोग हुए। पर आज कुशिक्षा और पाश्चात्य अपसंस्कृति के प्रभाव में आकर हमारे देश के युवा अपना चारित्रिक सामर्थ्य खोते जा रहें हैं। उन्हें सही शिक्षा देकर चरित्र निर्माण के लिए प्रेरित करना हम सबका कर्तव्य हैं।

लड़कों में यौवनारंभ 13 से 16 वर्ष की आयु में आरंभ हो जाता हैं। किशोर अवस्था में वृषण या अंडकोष (Serotal Sacs) में टेस्टोस्टेरोन हार्मोन्स बनने लगता हैं, जिससे बालक के यौवन अंगों में परिवर्तन होने लगता हैं। इसके प्रभाव से शिश्न (लिंग) एवं एक जोड़ी वृष्ण सक्रिय हो जाते हैं। दाढ़ी-मूंछे आने लगती हैं तथा जननांग और बगलों में बाल उगने लगते हैं। तेल, पसीने की ग्रन्थियां क्रियाशील हो जाती हैं, जिसके कारण मुंहासे निकल आते हैं। मांसपेशियों में वृद्धि होकर शरीर सुडौल बनने लगता हैं तथा कंधे चौड़े होने होने लगते हैं। आवाज में भारीपन आ जाता हैं। शरीर में शुक्रधातु (वीर्य) का निर्माण होने लगता हैं।

आयुर्वेद के मतानुसार मनुष्य के शरीर में सात धातु होते हैं- रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और अन्तिम धातु वीर्य (शुक्र) है। वीर्य ही मानव शरीर का सारतत्व है। आयुर्वेद शास्त्र की मान्यता अनुसार वैसे तो नित्यप्रति नया रक्त एवं नया वीर्य बनता हैं,क्योंकि मनुष्य नित्यप्रति भोजन करता हैं, लेकिन क्रमगत रूप में भोजन से वीर्य तैयार होने में 35 दिन लग जाते हैं। भोजन से रस बनने में 5 दिन लगते हैं, फिर रस से रक्त बनने में 5 दिन लगते हैं। आगे 5-5 दिन का क्रम चलता है, तब कहीं जाकर अन्त में वीर्य बनता है। जैसे दूध में घी, गन्ने में रस, तिलों में तैल व अधखिले फूल में गंधकोश रहता हैं, ठीक उसी प्रकार बालकों के शरीर में वीर्य समाया रहता हैं। कामुक क्रियाकलापों के द्वारा पूरे शरीर में मंथन चलता है और शरीर का सार तत्व कुछ ही समय में बाहर आ जाता है। रस निकाल लेने पर जैसे गन्ना छूंट हो जाता है कुछ वैसे ही स्थिति वीर्यहीन मनुष्य की हो जाती हैं।

वीर्य जिन वस्तुओं से बनता हैं उनमें सर्वाधिक प्रोटीन होता हैं। प्रोटीन भी इसमें न्यूक्लियों प्रोटीन होता हैं। शरीर की वृद्धि और विकास में इस तत्व का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान होता हैं। प्रोटीन के अतिरिक्त वीर्य में सोडियम लवण, फास्फोरस, फास्फेट व कुछ खारे पदार्थ तथा 80 से 90 प्रतिशत तक जलीय अंश होता हैं।

वीर्य के अन्दर जो रंगहीन पदार्थ होता है उसे 'लाइकर सैमिनियम' कहते हैं। इसमें अलब्यूमिन, वीर्य के कण तथा वीर्य कीट (शुक्राणु) होते हैं वीर्य कणों को 'सेमिनल ग्रेन्योल्ज' कहते हैं और इनकी गोलाई 1/4000 इंच होती हैं। वीर्य कीटों को 'स्परमेटाजोवा' कहते हैं, इनकी लम्बाई 1/5000 इंच तथा चौड़ाई 1/600 इंच होती हैं। इन्हें सामान्य दृष्टी से नहीं देखा जा सकता, परन्तु सूक्ष्मदर्शी (अनुवीक्षण) यंत्र के द्वारा इनके स्वरूप को देखा जा सकता हैं।

वीर्य की एक बूँद में हजारों वीर्य कीट रहते हैं। ये बराबर वीर्य में चलते-फिरते रहते हैं। वीर्य कीटों के द्वारा ही गर्भ की रचना होती हैं। वीर्य-कीटों का सिर मोटा, चपटा तथा अण्डाकार होता हैं और पूँछ पतली तथा नुकीली होती हैं। मरने के बाद इनकी पूँछ सीधी हो जाती हैं। एक बार के वीर्य स्खलन में लगभग 15 से 20 ग्राम वीर्य निकलता हैं, जिसमें 18 से 30 करोड़ वीर्य कीट होते हैं।

वीर्य कीटों के विकास का समय है यौवनावस्था। वीर्य के परिपक्व होने से पहले ही वीर्य का नाश करने से वीर्य कीटों का विकास नहीं हो पाता, वीर्य पतला हो जाता हैं तथा वीर्य कीटों की गति सुस्त हो जाती हैं, जिससे वीर्य कीट गर्भाशय तक नहीं पहुँच पाता। यौवनावस्था में वीर्य ऊर्जा का दुरुपयोग करके जो लोग गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते हैं, वे अपने वैवाहिक जीवन से सन्तुष्ट नहीं हो पाते तथा उनका वैवाहिक जीवन अन्यंत दु:ख पूर्ण होता हैं।

योवाओं को वीर्य शक्ति (Sexual energy) का संरक्षण करना चाहिये। वीर्य शक्ति प्रजनन के लिए हैं, दुरूपयोग के लिए नहीं हैं। शरीर की रक्षा करने का कार्य वीर्य ही करता हैं। जब तक शरीर में वीर्य रहता हैं, तब तक शरीर पूर्ण स्वस्थ, सुन्दर और निरोगी रहता हैं। आत्मसंयम पूर्वक वीर्य के संयम से व्यक्ति ओजस्वी, तेजस्वी बन जाता हैं तथा उसकी दीर्घ आयु होती हैं।

किसी भी सभ्यता की नींव उस सभ्यता के मनुष्यों का चरित्र होता हैं। चरित्र की रक्षा किये बिना समाज, संस्कृति और राष्ट्र की रक्षा असंभव हैं। जिस प्रकार भवन की नींव कमजोर हो तो वह लम्बे समय तक खड़ा नहीं रह सकता, उसी प्रकार जिस सभ्यता का चरित्र कमजोर होगा वह लम्बे समय तक खड़ी नहीं रह सकती, काल के थपेड़े (झटके) खाकर नष्ट हो जाती हैं। यदि सभ्यता की रक्षा करनी हैं तो राष्ट्र के बालकों के चरित्र को सशक्त बनाना होगा।

आज के बालक ही कल के नागरिक हैं, देश के भावी कर्णधार हैं। बालकों का जीवन पौधों जैसा होता हैं, जिसे सद्‌गुणों की खाद से सींचना पड़ता हैं। विद्‌यार्थी काल जीवन रूपी भवन की नींव हैं। इस काल में जिस प्रकार के संस्कार उनमें पड़ जाते हैं, उसी प्रकार से उनका जीवन विकसित होता हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि हम किशोरावस्था में प्रवेश कर रहे बालकों को कैरियर के प्रति जागरूक करने के साथ-साथ वैज्ञानिक अध्यात्मवाद और योग पर आधारित ऐसी शिक्षा दें जिससे उनका सर्वांगिक विकास हो सकें।

परिवार बालकों की पहली पाठशाला हैं। जैसा वातावरण परिवार का होता हैं, उसी के अनुसार किशोरों का मानसिक संस्थान, आदतें, सांस्कृतिक स्तर आदि का निर्माण होता हैं। बहुत कम बालक ऐसे होते है जो सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं के अनुसार अपना जीवन बना पाते हैं। किशोर अवस्था में होने वाले शारीरिक-मानसिक परिवर्तनों के कारण उनमें विपरीत लिंग के प्रति विशेष आकर्षण और उत्सुकता होने लगती हैं। इस आयु में सही शिक्षा एवं जानकारी के अभाव तथा कुसंगति के प्रभाव से उनमें नैतिक-चारित्रिक दोष उत्पन्न हो सकते हैं, जिनका परिणाम बड़ा घातक होता हैं।

प्रत्येक अभिभावक का यह नैतिक कर्तव्य बनता हैं की वह किशोर होते बालक-बालिकाओं को इस आयु में होने वाले परिवर्तनों के बारे में समझाएं और उन्हें वैज्ञानिक यौवन रक्षक स्वास्थ्य शिक्षा अवश्य प्रदान करें। शारीरिक परिवर्तनों और ब्रह्मचर्य का महत्व यदि इन किशोरों को प्रारम्भ में ही समझा दिया जायें तो उनकी उत्सुकता भी शांत हो जाएँ और भविष्य में वे चारित्रिक दोषों से भी बच जायें।

यदि हमें अपने बालकों को कामुकता से मुक्त करना है, काम से ऊपर उठाना हैं, तो किशोरों में उत्पन्न होने वाली काम ऊर्जा के रूपान्तरण के लिए एक नया द्‌वार खोलना होगा- ध्यान का द्‌वार। काम के रूपांतरण की सही दिशा हैं- ध्यान।

ध्यान यौवन रक्षा का सर्वाधिक प्रबलतम साधन हैं। ध्यान चित्त की स्थिरता का ही दूसरा नाम हैं। ध्यान जितना परिपक्व होता हैं, चित्त की स्थिरता जितनी बढती हैं, उतनी ही काम की सम्भावना जीवन में कम होती चली जाती हैं। ऊर्जा एक नए द्‌वार से बहने लगती हैं। काम की ऊर्जा ही अंततः राम में रूपान्तरित होती हैं।

प्रत्येक जागरूक अभिभावक को घर के बालकों को चौबीस घंटों में से एक अथवा आधे घंटे के लिए ध्यान में, मौन में, भक्ति में ले जाने की व्यवस्था करनी चाहिए। निश्चित ही वे ध्यान में तभी जा सकेंगे, जब आप भी उनके साथ ध्यानपूर्वक-भक्तिपूर्वक बैठ सके। हर घर में आधा-एक घंटा ध्यान का, भक्ति का प्रतिदिन अवश्य होना चाहिए। ध्यान वह कुंजी है जो परमात्मा की दी हुई अनंत शक्तियों का भण्डार खोल देती हैं।

अभिभावकों को किशोरों की संगती पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। उन्हें कुसंगति से बचाना चाहिए। उन्हें ऐसी संगती में उठने-बठने नहीं देना चाहिए जहाँ उनके बिगड़ जाने की सम्भावना हो। इसके साथ ही किशोरों

को अकेले कमरे में नहीं सुलाना चाहिए। अकेले कमरे में सोकर वे बुरी आदतों का शिकार हो सकते हैं। परिवार के सदस्यों के साथ सोने से किशोरों को गन्दी आदतों का मौका नहीं मिलता। यदि वे पढाई-लिखाई और खेलकूद की अपेक्षा सौन्दर्य, फैशन, फोन और सिनेमा पर सामान्य से अधिक ध्यान देने लगें तो ऐसी स्थिति में अभिभावकों को थोड़ी कठोरता बरतनी चाहिए और उन्हें समझाना चाहिए। उन्हें सही ढंग से कपडे पहनने और अपने व्यवहार को संयमित करने की सलाह देनी चाहिए। चाणक्य नीति में कहा गया हैं-

लालयेत पंचवर्षाणि दशवर्शाणि ताडयेत् ।
प्राप्तेषु षोडषे वर्षे पुत्रे मित्रवदाचरेत् ॥

Allow pampering of the children for (first) five years, reprimand them (after that) for ten years, (but) once they become sixteen years of age treat them like friends.

प्रथम पांच वर्ष पुत्रना लालन-पालन करो, बाद में दस वर्ष तक उसका ताडन करो, और पुत्र सोलह वर्ष का हो जाए तो उसके साथ मित्र जैसा व्यवहार करो।

अभिभावकों को किशोरों के मित्र बनकर उनके मन की बात जाननी चाहिए और उनकी उलझनों को सुलझाने में सहायता करनी चाहिए। यदि किशोर लड़के-लड़कियां कुछ गलत करे तो उन्हें प्यार से समझाना चाहिए। यदि वे क्रोधी, आलसी या जिद्दी हो गए हैं तो उनकी इन आदतों को एक सीमा तक ही सहन करें, अन्यथा ये आदते उनके जीवन का अंग बन सकती हैं।

धार्मिक बनिए, अधर्म का नाश करिए। साथ ही हमें अपने बच्चों को लव जिहाद के खतरनाक इस्लामिक षड्यंत्र के बारे में खुलकर बताना चाहिए। वैसे भी विवाह करने की आयु नहीं होती पर बच्चे पैदा करने की एक आयु होती है। विधर्मी लोग अपने बच्चों का विवाह जल्दी कर देते है। लेकिन हम हिन्दू लोग अपनी बेटी के लिए आत्मनिर्भर या नौकरीपेशा लड़का ही ढूढेंगे जबकि वेल सेट होने में समय लगता है क्योंकि 23 या 25 में तो कैरियर शुरू होता है !! इससे लड़कियो के विवाह में देरी हो जाती है, या कुछ लड़कियाँ गृहस्थी की जिम्मेदारी से कुछ ओर वर्षो तक बचने के लिए जानबूझ कर लड़को को रिजेक्ट कर देती है, लेकिन एक दिन वो लड़की भटककर लव जेहाद की शिकार हो सकती है क्योंकि पानी और जवानी अपना रास्ता ढूढ़ ही लेती है ! ऊपर से दहेज की समस्या, आज भी कुछ लोग अपने बेटे के विवाह में दहेज मांगते है, जो बहुत ही गलत है, इस दहेज प्रथा को तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। सोचिए ! बेटी के मन पर क्या गुजरती होगी अपने बाप की लाचारी को देख के ? हम हिन्दुओं को अपनी बेटी का विवाह 18 से 20 वर्ष व बेटे का विवाह 21 से 25 वर्ष की उम्र तक कर ही देना चाहिए।

किशोरों के व्यक्तित्व निर्माण में अभिभावकों की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। आरम्भ से ही किशोरों को अनुशासन, व्यायाम, ध्यान, भक्ति, सदाचार, कर्तव्यपालन, आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता आदि का महत्व समझाया जाना चाहिए तथा उन्हें कैरियर के प्रति जागरूक करते रहना चाहिए, जिससे उनका सर्वांगिक विकास हो सकें।

काम शक्ति का दमन या ऊर्ध्वगमन

वैज्ञानिक यौवन रक्षक - लेखक: विश्वजीत सिंह अनंत (युग क्रान्तिदर्शी)
प्रकाशक: सनातन संस्कृति संघ ट्रस्ट

काम (Sex) हमारे जीवन की सृजनात्मक शक्ति हैं। काम सृष्टिक्रम में एक प्राकृतिक व्यवस्था हैं। काम एक मूल प्रवृति हैं। यौवन अवस्था आने पर स्वाभाविक रूप से काम (Sex) की इच्छा होती हैं। इसके अतिरिक्त कामुक वार्तालाप आदि देखने-सुनने से भी काम की इच्छा जागृत होने लगती हैं। काम का यथार्थ उपयोग सृजन में हैं। यही प्रकृति की यवस्था हैं।

परमात्मा ने मनुष्य को विवेक बुद्धि सहित उन अगणित क्षमताओं से सम्पन्न बनाया है, जो काम प्रवृति का प्रयोग वंश-प्रवाह को बनाये रहने के अतिरिक्त शारीरिक बलिष्ठता, मानसिक दक्षता-प्रतिभा एवं आत्मिक प्रखरता के रूप में कर सकता है। आवश्यकता मात्र प्रवाह-परिवर्तन की होती है। वेगवती नदियों के प्रचंड प्रवाह को उपयुक्त दिशा में रूपांतरित कर देने पर उससे विद्युत शक्ति का असीम भण्डार पैदा हो जाता है। जल-वाष्प से बड़े-बड़े स्टीम इंजन चलने लगते हैं। इसी तरह यदि कामशक्ति को-जीवन ऊर्जा को ऊर्ध्वगति प्रदान की जा सके, तो वह प्राण-विद्युत के भाण्डागार के रूप में बदल कर मानवी गौरव-गरिमा के उपयुक्त उत्कर्ष में सहायक बन जाती है। कामशक्ति का दमन नहीं, वरन् उदात्तीकरण ही उसके सदुपयोग का सही मार्ग है। फ्रायडवादी प्रतिपादनों के अनुरूप आचरण करना अपने विनाश को स्वयं आमंत्रित करना है। इस शक्ति का समुचित सुनियोजन ही मानव जीवन के लिए कल्याणप्रद है।

कामशक्ति का दमन करना, कामविकार से बचने का सही समाधान नहीं है। दमित की गई भावनाएं ही कालांतर में आगे चलकर मानसिक रोगों का कारण बनती है और हमारे व्यक्तित्व को प्रभावित करती हैं। सही समाधान है इस काम शक्ति को ऊर्ध्वमुखी बनाकर शरीर में ही इसका उपयोग करके परम सुख को प्राप्त करना। यह युक्ति जिसको आ गई, उसे सब आ गया और जिसे यह नहीं आई वह समाज में कितना भी सत्तावान्, धनवान्, प्रतिष्ठावान बन जाय, अन्त में मरने पर अनाथ ही रह जायेगा, आत्म-साक्षात्कार नहीं कर पायेगा। नारद मुनि यह युक्ति जानते थे, तभी रत्नाकर जैसा निर्दयी डाकू भी सारे दुष्कृत्य छोड़कर महर्षि वाल्मीकि बन गया। ऐसे महापुरुषों में वह शक्ति होती है, जिसके प्रयोग से साधक के लिए ब्रह्मचर्य की साधना एकदम सरल हो जाती है। फिर कामविकार से लड़ना नही पड़ता है-, बल्कि जीवन में ब्रह्मचर्य सहज ही फलित होने लगता है।

आपने ऐसे लोगों को देखा होगा, जो थोड़ा सी साधना करते हैं और बहुत पूजे जाते हैं। और ऐसे लोगों को भी देखा होगा जो बहुत जप तप साधना करते हैं फिर भी समाज पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता, उनमें आकर्षण नहीं होता। हो न हो, जाने-अनजाने में जागृत अथवा निद्रावस्था में या अन्य किसी प्रकार से उनकी काम शक्ति अवश्य नष्ट होती रहती है।

काम शक्ति के दो पक्ष होते हैं- एक शारीरिक और दूसरा आत्मिक। शारीरिक ऊर्जा (Biological Energy) का सम्बन्ध वीर्य से हैं जो दिखाई पड़ता हैं, किन्तु आत्मिक ऊर्जा (Physical Energy) तो केवल अनुभव (Feel) की जा सकती हैं। मानसिक ऊर्जा जब कामक्रीड़ा के लिए सक्रिय होती हैं तब इस ऊर्जा को यौनिक ऊर्जा (Sexual Energy) कहते हैं। जिस प्रकार पृथ्वी हमें दिखाई पडती हैं किन्तु उसमें व्याप्त गुरुत्वाकर्षण शक्ति केवल अनुभव की जा सकती हैं। चुम्बक दिखता हैं किन्तु Magnatic Field दिखाई नहीं पड़ता, ठीक उसी प्रकार कामक्रीड़ा में वीर्य का निकलना हमें दिखाई पड़ता हैं, पर मानसिक ऊर्जा जो खर्च होती हैं वह केवल अनुभव की जा सकती हैं।

काम ऊर्जा पर जितना सूक्ष्म और गहन चिंतन भारतीय ऋषियों ने किया हैं, उतना अन्य देश के विद्वान नहीं कर पायें। पश्चिमी शरीरशास्त्री, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक शरीर और मन के तल तक ही काम ऊर्जा पर विचार कर पाए हैं, जबकि भारतीय मनीषियों ने इस ऊर्जा के रहस्य को जानकर स्पष्ट कर दिया था कि शारीरिक तल पर जब स्थूल रूप में यह ऊर्जा नीचे की तरफ प्रवाहित होती हैं तब वह 'काम' बन जाती हैं और जब वही ऊर्जा संयमित जीवन द्वारा ऊपर की तरफ प्रवाहित होने लगती है तो परमात्मा बन जाती हैं।

काम की शक्ति परमात्मा की शक्ति हैं, ईश्वर की ऊर्जा हैं। काम (Sex) ऊर्जा का अधोगमन हैं, नीचे की तरफ बह जाना हैं। ब्रह्मचर्य ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन हैं, ऊपर की तरफ उठ जाना हैं। काम का विरोध नहीं हैं ब्रह्मचर्य, काम का ही रूपान्तर हैं। ब्रह्मचर्य अर्थात ब्रह्म जैसा जीवन, परमात्मा जैसा अनुभव उपलब्ध हो जाना। और वह हो सकता हैं अपनी शक्तियों को समझकर रूपान्तरित करने से। रूपान्तरित होने के बाद काम की ऊर्जा राम में बदल जाती हैं। काम अमृत-संजीवनी हैं। इसका सदुपयोग करें। यह दुरूपयोग के लिए नहीं हैं।

काम ऊर्जा के ऊर्ध्वगामी होने का अर्थ यह नहीं है कि वीर्य स्थूल रूप से ऊपर सहस्रार की ओर जाता हैं। इस विषय में सामान्य जन भ्रमित हैं। वीर्य को ऊपर चढ़ाने की कोई भी नाडी शरीर के भीतर नहीं हैं। वीर्य तो वही पौरुष ग्रन्थियों में स्थित रहता हैं, शुक्राणु ऊपर नहीं जातें, किन्तु उसकों संचालित करने वाली जो काम ऊर्जा हैं, उसका ऊर्ध्वगमन होता हैं।

ब्रह्मचारी को जितेन्द्रिय होकर अपनी समस्त इंदियों आँख, कान, नाक, त्वचा व रसना को सदैव सदा शुभ की ओर प्रेरित करना चाहिए। मन को विकार पूर्ण रहने देकर शरीर को दबाने का प्रयास करना हानिकारक हैं। जहाँ मन है, वहां अन्त में शरीर भी गए बिना नहीं रहता।

कुछ युवक-युवतियां जबरजस्ती ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए काम दमन की चेष्टाऐ करते पाएं जाते हैं। उन्हें यह भी ज्ञात नहीं होता की जननेंद्रिय तो काम विकार प्रकट होने का एक साधन मात्र हैं। पवित्र धर्मशास्त्र गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं-

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥

'जो मनुष्य कर्मेन्द्रियों को तो (हठपूर्वक) ऊपर से वश में करता हैं किन्तु जिसका मन उन इन्द्रियों के विषयों का चिन्तन करता रहता है, वह निश्चित रूप से स्वयं को धोखा देता हैं और मिथ्याचारी कहलाता हैं।'

काम पर नियंत्रण पाने के लिए मन पर नियंत्रण पाना होगा। याद रखें इन्द्रियां मन के आदेशों का पालन करती हैं। इसलिए इन्द्रियों को जबरदस्ती वश में करने का प्रयत्न न करके मन को वश में करना चाहिए।

मन सात्विक आहार-विहार, चिन्तन, ध्यान, भक्ति, स्वाध्याय, खेलकूद, आसन, प्राणायाम आदि ब्रह्मचर्य के साधन अपनाने से वश में हो जाता हैं। मन को वश में कर लेने पर इन्द्रियों पर भी विजय आसानी से प्राप्त हो जाती हैं। इन्द्रियों पर अधिकार होने से ब्रह्मचर्य पालन करना सहज हो जाता हैं। फिर काम से लड़ना नहीं पड़ता, बल्कि जीवन में ब्रह्मचर्य सहज ही फलित होने लगता हैं। काम ऊर्जा के ऊर्ध्वगामी हो जाने पर मनुष्य में शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सभी प्रकार की शक्तियों की वृद्धि होती हैं।

भारतीय संस्कृति और काम (Sex)

काम तत्व की महत्ता एवं समर्थता से प्राचीन ऋषि-मनीषी भली-भाँति परिचित थे। यही कारण था कि उन्होंने उसके दमन की नहीं, अपितु सृजनात्मक कार्यों में लगाने की विचारधारा को जन्म दिया था और इसे जीवन के चार प्रमुख लक्ष्यों (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) में से एक माना गया। अथर्ववेद में काम शक्ति को सृष्टि की सबसे महान शक्ति बताया गया है। वह सृजन भी कर सकती है और दुरुपयोग होने पर ध्वंस भी खड़ा कर सकती है। यही वह शक्ति है, जो प्रत्येक प्राणी के अन्तराल में समाहित उल्लास के रूप में उमंग लाने, आगे बढ़ने, ऊँचा उठने, विनोद का रस लेने एवं साहसिक प्रयास करने के रूप में निरन्तर प्रस्फुटित होती रहती है। इसी को आकर्षण शक्ति कहते हैं। जड़ पदार्थों में ऋण और धन विद्युत के रूप में इसे ही कार्यरत देखा जाता है। भौतिकी के अनुसार भी सृष्टि की गतिविधियों का उद्‌गम यही है। शक्ति तरंगें उसी से उद्‌भूत होती और संसार की अनेकानेक हलचलों का सृजन करती हैं।

महान भारतीय संस्कृति के पूर्वजों ने इसीलिए मानव जीवन को चार आश्रमों में विभाजित किया था। चार आश्रम हैं:- ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, और सन्यास। जीवन के प्रथम आश्रम का नाम ब्रह्मचर्य हैं। यह आश्रम शेष जीवन के आधार का कार्य करता हैं। यह मानव जीवन की नींव हैं। इसमें मनुष्य अपना शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास करता हैं। रेतस्-जीवन ऊर्जा का ऊर्ध्वमुखी होकर मस्तिष्क की ओर प्रवाहित होना ही ब्रह्मचर्य हैं। यह ऊर्जा जब आध्यात्मिकता की ओर मुड़ जाती है, तो आत्मा-परमात्मा में विचरण करने लगती है। ब्रह्मचर्य परायण जीवन इसी का नाम है वेदों, उपनिषदों एवं महापुरुषों का यही आदर्श एवं आदेश भी है।

इस महाशक्ति का परिष्कार एवं ऊर्ध्वीकरण कार्यक्षेत्र में ओजस्, मनःक्षेत्र में तेजस् और अन्तराल में आत्मिक विभूतियों के रूप में वर्चस् बनकर उद्‌भूत होता और मानव जीवन को धन्य बना देता है। वेदों में कामशक्ति के इसी दिव्य स्वरूप का नमन वन्दन किया गया है।

काम जागृति के कारण - अष्ट मैथुन

आयुर्वेद के अनुसार मनुष्य के अन्दर चार मूलभूत ऐसी प्रवृतियां होती हैं, जिनकी पूर्ति करने पर पुन: आवश्यकता होती हैं, वे है- भूख, प्यास, नींद और कामेच्छा। मनुष्य भोजन करता हैं, लेकिन अगले समय फिर भूख लगती हैं। मनुष्य एक रात में सोता है तो अगली रात में फिर नींद लगती हैं। कहने का तात्पर्य यह हैं कि ऐसा नहीं है कि एक बार पूर्ण रूप से पूर्ति के पश्चात फिर दोबारा आवश्यकता नहीं होती हैं। उसी प्रकार काम भी हैं। काम मनुष्य की एक मूल प्रवृत्ति हैं। यौवन आने पर स्वाभाविक रूप से काम (Sex) की इच्छा होती हैं।

अंदर अधिक वीर्य इकठ्ठा होने से भी काम जागृत होने लगता हैं, जो कि स्वप्नदोष का मूल कारण होता हैं। इसके अतिरिक्त बाह्य कारणों से भी कामवासना जागृत होती हैं।

काम का वेग बड़ा ही प्रबल होता हैं। देखने, सुनने, विचार आदि करने मात्र से यह जागृत होने लगता हैं। समय पाकर यह प्रबल हो जाता हैं और मनुष्य काम के वेग में बह जाता हैं। काम जागृत होने से तेजी से वीर्य का निर्माण होता हैं, जिससे ऊर्ध्वरेता का पतन हो जाता हैं तथा अंत: में प्राय: ब्रह्मचर्य खण्डित हो जाता हैं।

लड़कों में 15-16 वर्ष की आयु से 20-22 वर्ष की आयु तक और लड़कियों में 13-14 वर्ष की आयु से 17-18 वर्ष की आयु तक कामाग्नि बड़ी प्रबल होती हैं। इस समय उन्हें अपनी काम शक्ति का संरक्षण करना चाहिए। इन्द्रिय संयम पूर्वक यह समय व्यतीत हो जाए तो फिर उतना बड़ा खतरा नहीं रहता। इस आयु में अष्ट मैथुन आदि से बचे रहकर ओज की रक्षा करनी चाहिए। हमारे मनीषियों ने अष्ट मैथुन इस प्रकार बताएं हैं-

स्मरणं कीर्तनं केलि:, प्रेक्षणं गुह्यभाषणम्।
संकल्पोऽध्यवसायश्च, क्रियानिष्पत्तिरेव च।।

पुरुष के लिए स्त्री का और स्त्री के लिए पुरुष का कामुक भाव से दर्शन करना अर्थात देखना, उन्हें स्पर्श करना, स्मरण करना अर्थात उनके बारे में विचार करना, साथ खेलना, कीर्तन अर्थात उनके साथ कामुक बातें करना, उनके बारे में संकल्प अर्थात चिंतन करना, उनकों वासना पूर्ति हेतु प्राप्त करने का प्रयत्न करना और क्रिया निवृति अर्थात् सम्भोग करना।

ये आठ प्रकार के मैथुन हैं। अपरिपक्व युवा अवस्था में जो इनसे बचकर रहते हैं, उनके लिए शारीरिक व मानसिक दोनों प्रकार से ब्रह्मचर्य का पालन करना आज के युग में भी संभव है और उससे विभिन्न प्रकार की लब्धि व सिद्धि प्राप्त होती हैं|

ब्रह्मचर्य जीवन जीने के उपाय

शरीर के अन्दर विद्यमान 'वीर्य' ही जीवन शक्ति का भण्डार है। शारीरिक एवं मानसिक दुराचर तथा प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक मैथुन से इसका क्षरण होता है। कामुक चिंतन से भी इसका नुकसान होता है। अत: इनसे बचने के कुछ सरल उपाय निम्नलिखित है-

1. ब्रह्मचर्य जीवन जीने के लिये सबसे पहले 'मन' को साधने की आवश्यकता है। काम शक्ति का सम्बन्ध शरीर की अपेक्षा मन से अधिक होता हैं। मन सात्विक आहार-विहार करने से सधता हैं।

2. कामुक चिंतन आने पर निम्नलिखित उपाय करें-

* जब आपके मन में कोई कामुक विचार आयें, काम का वेग उठे और आपका ध्यान अपनी जननेंद्रिय की ओर खिंचने लगे तो आप तुरंत सचेत होकर जननेंद्रिय को अन्दर पेट की ओर खीचों और आँखें बंद करके अपना ध्यान सहस्रार चक्र (सिर के सबसे ऊपर का भाग) में केन्द्रित करों। कुछ ही देर में आपका काम का वेग शांत हो जायेगा।

मन जिस ओर लगता है, उस ओर ही यह शक्ति बहने लगती हैं। सहस्रार में ध्यान लगाने से जो शक्ति मूलाधार में सक्रिय होकर वीर्य को स्खलित करने वाली थी, वही ऊर्ध्वगामी होकर आपको वीर्य पतन से बचा लेगी।

* जब भी आपके मन में कामुक विचार आये तो आप अपने मन को उन कामुक विचारों से हटाकर माता-पिता, गुरु, संत, ईश्वर आदि का चिंतन करना शुरू कर दों या किसी कार्य में व्यस्त हो जाओं। ऐसा करने से कामुक विचार उसी प्रकार से शांत हो जाते हैं, जिस प्रकार से प्रकाश होने पर अंधकार गायब हो जाता हैं।

* जब भी काम का वेग उठे और आपका ध्यान अपनी जननेंद्रिय की ओर खिंचने लगें या आपका यौनांग उत्तेजित होने लगें तो आप तुरंत सचेत होकर अपने फेफड़ों में भरी वायु को जोर से नाक के द्वारा बाहर निकाल दें। जितनी अधिक वायु बाहर निकाल सकते हैं, उतना उत्तम हैं। श्वांस को बाहर ही रोककर नाभि और पेट को अंदर की ओर खींचें। यथाशक्ति करने के बाद श्वांस लेते हुए सामान्य हो जायें। इसकों पूर्ववत् दो-तीन बार करें। इसके करने से काम का वेग तत्काल शांत हो जाता हैं।

श्वांस को बाहर रोककर नाभि और पेट को अंदर की ओर खिंचने से काम केंद्र के आस-पास की सारी शक्ति जो वीर्य के पतन में सहयोगी बनती है, खिंचकर नाभि की ओर चली जाती हैं और इस प्रकार आप वीर्य के नष्ट होने से बच जायेंगे।

इस क्रिया को कही भी बैठकर या खड़े होकर किया जा सकता हैं। काम विकार के न उठने पर भी यह प्रयोग किया जा सकता हैं। यह जठराग्नि को तीव्र करके पेट सम्बन्धी सभी रोगों को दूर करता हैं। पुरुषों के धातु सम्बन्धी रोग और स्त्रियों के प्रमेह व ऋतु सम्बन्धी रोगों में लाभकारी हैं।

* अच्छे साहित्य का अध्ययन करें। जैसे- वेद, उपनिषद, गीता, रामायण, महाभारत, सत्यार्थ प्रकाश, धर्म शिक्षा, धर्म शास्त्र आदि।

* जब मन में असंयम उत्तेजना आए तो अकेले न रहें। स्थान परिवर्तन कर दें। सत्साहित्य पढ़ें, या किसी सात्विक स्वभाव वाले मित्र, माता, पिता, महापुरुष या गुरुजन से मिलें या परमात्मा को स्मरण करें।

* लकड़े-लड़कियां आपस में से आँख में आँख मिलाकर बाते न करें, क्योंकि शरीर में विद्यमान विद्युत शक्ति सबसे ज्यादा 'आँखों' के माध्यम से बाहर निकलती है एवं प्रभावित करती है। आँखें मिल भी जाये तो परस्पर भाई-बहन होने की कल्पना करें।

3. मैथुन क्रिया से होने वाली हानि निम्नलिखित है-

* शरीर की जीवनी शक्ति घट जाती है, जिससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है।
* आँखो की रोशनी कम हो जाती है।
* शारीरिक एवं मानसिक बल कमजोर हो जाता है।
* स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है।
* चिंतन विकृत हो जाता है।
* जितना वीर्य बचाओगे उतना ही जीवन पाओगे।

* जिस तरह जीने के लिये ऑक्सीजन चाहिए वैसे ही 'निरोग' रहने के लिये 'वीर्य'।
* ऑक्सीजन प्राणवायु है तो वीर्य जीवनी शक्ति है।
* सात्विक भोजन, सकारात्मक चिंतन एवं सेवा कार्यों में व्यस्त रहने से 'मन' नियंत्रित होता है। मन के नियंत्रण से ब्रह्मचर्य जीवन साधने में 'सरल' हो जाता है।

ब्रह्मचर्य पालन में निम्नलिखित नियम सहायक सिद्ध होंगे–

1. प्रात: ब्रह्ममुहूर्त में उठ जाएँ।
2. नित्य योगासन, प्राणायाम, ध्यान तथा व्यायाम का कुछ देर अभ्यास करें। शुद्ध वायु का नित्य प्रात: और सायं को सेवन करें।
3. नित्य संध्या करनी चाहिये। गायत्री मन्त्र या अपने इष्ट मन्त्र का जप करें।
4. तेज मिर्च मसालेदार भोजन से बचें। शुद्ध सात्विक शाकाहारी भोजन करें।
5. सभी नशीले पदार्थ (शराब, तम्बाकू, गुटखा, तम्बाखू, सिगरेट, शराब आदि) शरीर में उत्तेजना एवं चरित्र-भ्रष्टता लाते है। नशे से बचें।
6. टीवी, सिनेमा, श्रृंगारिता, अश्लील साहित्य, उत्तेजक दृश्य-संगीत आदि से बचें।
7. चरित्रहीन, व्यसनी, आवारा मित्रों (लडक़े-लड़कियों दोनों) से बचें। कुसंग त्यागें।
8. सत् साहित्य, महापुरुषों के जीवन चरित्र से प्रेरणा लें। स्वाध्याय की आदत डालें। जिसमें वेद, उपनिषद्, रामायण, गीता, महाभारत, धर्म शास्त्र आदि का पठन होना चाहिये।
9. रात्रि में दूध पीते हों तो सोने के आधा-एक घंटे पहले पीएँ व ठण्डा करके पीएँ ।
10. रात्रि शयन के पूर्व महापुरुषों के जीवन चरित्र का स्वाध्याय करें।
11. मन को खाली न छोड़ें किसी रचनात्मक कार्य व लक्ष्य से जोड़ रखें।
12. एकान्त में लड़के लड़कियों से और लड़कियां लड़कों से अनावश्यक बातचीत मेल मिलाप से बचें।
13. इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिये कि यह शरीर नाशवान है, किसी दिन भी मृत्यु हो सकती है। अतएव अपना समय वेदाँत चर्चा और भगवद्जन में ही व्यतीत होवे भोग विलास में नहीं।
14. स्त्री पुरुष में और पुरुष स्त्री में ऐसी भावना करे कि यह संसार इस अनन्त ब्रह्म का हैं, इसमें जितने प्राणी हैं सब उस दयालु प्रभु की ही सृष्टि हैं और इन सब में प्रभु का अंश है, सब एक हैं।
15. निरन्तर भगवान को स्मरण रखे, कभी न भूले, भगवद् भक्ति के उदित होते ही अज्ञान रूपी अन्धकार स्वयं ही नष्ट हो जाता है। अन्त में एक बार पुन: यह स्मरण दिलाते हैं कि ब्रह्मचर्य पालन में ही सुख है और उसके नाश में ही दुख, अतएव प्रत्येक विवेकशील मनुष्य को इन्द्रिय संयम पूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहियें।

प्रात: जागरण से समृद्धि

हे मनुष्यों ! उठो जागों हमारे लिए जीवन प्राण शक्ति आ गया हैं, उदय हो गया हैं। अन्धकार हट गया हैं, भाग गया हैं। उषा की ज्योति आ रही हैं। सूर्य के मार्ग को चलने, पहुंचने के लिए खोल दिया हैं, जहां जीवन शक्तियां जीवन को बढ़ाती हैं, उस अवस्था में हम पहुँच गये हैं।

"ऋग्वेद"

मनुष्यों को प्रातःकाल सवेरे उठकर परमेश्वर की उपासना करते हुए निर्दोष प्राण वायु का सेवन करना चाहिए। प्राण वायु ब्रह्ममुहूर्त से लेकर सूर्योदय तक निर्दोष रहती हैं, तथा स्वास्थ्य, सौन्दर्य, मेधा-वृद्धि, तेज और ओज को प्रदान करती हैं। अंग्रेजी में लोकोक्ति हैं-

Well begun is halp done.

'प्रातःकाल का पिछड़ा हुआ मनुष्य सायंकाल तक पिछड़ा ही रहता हैं।' जो प्रातःकाल की अमृत बेला को आलस्य में नष्ट कर देता हैं, उसका सम्पूर्ण दिन ही नष्ट हो जाता हैं। प्रातःकाल न उठने वाले मनुष्य अपना स्वस्थ्य. आयु, बल, इन्द्रिय संयम, ओज, सम्रद्धि, मान-सम्मान सभी कुछ खो देते हैं। अतः आत्मोत्थान की इच्छा रखने वालो को प्रातःकाल की अमृत बेला में ही उठना चाहिए।

एक दिन एक पादरी और एक मिशनरी महिला स्वामी दयानन्द सरस्वती के पास ज्ञान प्राप्ति की इच्छा लेकर मिलने आये। स्वामी जी ने उनसे कहा कि "सम्रद्धि की अधिकता जाति की अवनति का कारण हुआ करती हैं, जैसे कि वह आर्य जाति के अध: पतन का कारण हुई।" और उन्होंने रूप से कहा कि "इसी कारण से अंग्रेजों की दिनचर्या बिगड़ती जाती हैं। पहले जब हम सूर्योदय से पूर्व भ्रमण करने जाया करते थे, तो बहुत से अंग्रेज स्त्री-पुरुषों को वायु सेवन करते देखते थे, किन्तु अब वह बहुत दिन गये उठते हैं, इसलिए अब इनका राज्य नहीं रहेगा।"

प्रातःकाल उठने की बात छोटी सी दिखाई देती हैं, किन्तु इसका महत्व और बड़ा फल भारी हैं। जो मनुष्य इस समय चारपाई छोड़कर उठ जाता हैं, उसे आरोग्य, स्वास्थ्य, बल, बुद्धि, तेज, सम्रद्धि और दीर्घायु प्राप्त होती हैं। इस समय की वायु में सर्वाधिक ऑक्सीजन होती हैं। प्रातःकाल उठने वाले मनुष्य वृद्धावस्था में भी जवान बने रहते हैं। कब्ज, गैस, धातु विकार, मूत्र विकार, श्वेतप्रदर, लिकोरिया, क्षीण नेत्र ज्योति, तनाव, सिर दर्द, श्वास रोग, बालो का झड़ना, त्वचा विकार आदि रोगों से बचाव होता हैं। स्वप्नदोष के रोगियों को तो इससे तत्काल लाभ होता हैं, क्योकि स्वप्नदोष प्रायः इसी समय होता हैं।

किशोर व युवा लड़के-लडकियों को प्रातःकाल अमृत वेला में 4 से 4:30 बजे तक उठ जाना चाहिए। किन्तु प्रातःकाल 4 बजे आप तभी उठ सकते हैं जब सायंकाल 10 बजे से पूर्व सो जायें। युवाओं को 10 बजे से पूर्व सोने का तथा प्रातःकाल 4 बजे उठने का अभ्यास डालना चाहिए। प्राचीन काल के ऋषि-मुनि, वैज्ञानिक, महापुरुष हो अथवा आधुनिक काल के आचार्य चाणक्य, शिवाजी, गोकुल सिंह, महाराणा प्रताप, स्वामी दयानंद, महात्मा आनन्द स्वामी, महर्षि रमण, रानी चेन्नमा, दुर्गावती, माता अहिल्याबाई होलकर, चंद्रशेखर आजाद, आइंस्टीन आदि सभी प्रातःकाल उठने वाले थे। स्मरण रखिये-

'जैसा प्रातःकाल बीतेगा, वैसे ही सम्पूर्ण दिन की गति होगी।'

प्रातःकाल निंद्रा खुलते ही आलस्य त्यागकर बैठ जायें। ईश्वर का ध्यान करें। आठ बार गायत्री मंत्र का जप करें तथा भावमय होकर ईश्वर से यह प्रार्थना करें-

प्रात: प्रार्थना

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू। तुझ से ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू।।
तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान। सृष्टि की वस्तु वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान।।
तेरा ही धरते ध्यान हम, मांगते तेरी दया। ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला।।

ॐ तेजोऽसि तेजो मयि धेहि।
हे परमात्मा ! आप तेजरूप हैं, हमें तेज (आत्मिक शक्ति) से संपन्न बनाइए।
ॐ वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।
हे परमात्मा ! आप वीर्यवान हैं, हमें पराक्रमी - साहसी बनाइए।
ॐ बलमसि बलं मयि धेहि।
हे परमात्मा ! आप बलवान हैं, हमें बलशाली बनाइए।
ॐ ओजोऽस्योजो मयि धेहि।
हे परमात्मा ! आप ओजवान हैं, हमें ओजस्वी (शारीरिक बल और आभायुक्त) बनाइए।
ॐ मन्युरसि मन्युं मयि धेहि।
हे परमात्मा ! आप मन्यु रूप (अनीति अत्याचार के प्रति क्रोध करने वाले) हैं,
हमें भी अनीति का प्रतिरोध करने की क्षमता दीजिए।
ॐ सहोसि सहो मयि धेहि।
हे परमात्मा ! आप कठिनाईयों को सहन करने वाले हैं। हमें भी कठिनाइयों में अडिग रहने की,
उन पर विजय पाने की शक्ति दीजिए।

स्वर परीक्षण

प्रार्थना, चिंतन और मनन के पश्चात श्वांस पर ध्यान को ले आयें। श्वांस नासिका से अंदर आता हैं और बाहर जाता हैं। नासिका के दो स्वर होते हैं- दायाँ नासिका स्वर और बायाँ नासिका स्वर। नासिका के सामने हथेली करके जोर से श्वांस छोड़ें और अनुभव करें कि नासिका का कौन-सा स्वर तेज चल रहा हैं। जो स्वर तेज चल रहा होगा, उस स्वर से श्वांस भी तेजी से निकल कर हथेली का स्पर्श करती अनुभव होगी। जो स्वर तेज चल रहा हो उसी के ओर की हथेली को मुँह पर फेरकर, उसके दर्शन करके पूरक श्वांस लें। अर्थात श्वांस को अंदर लेते हुए उसी चलित वाले पैर को बिस्तर से नीचे भूमि पर रखें। इससे शरीर की धातुओं में संतुलन स्थापित हो जाता हैं।

चक्षु स्नान

जल से कुल्ले करके मुँह में जल भरकर, शुद्ध जल से दोनों आँखों में बार-बार हल्के हाथों से छींटे मारे। जिससे रात्रि के शयन समय जो उष्णता (गर्मी) अथवा मैल आँखों में आ जाता हैं, वह सर्वथा दूर हो जायें। नेत्रों को शीतल जल से धोने से नेत्र ज्योति बढती हैं तथा उष्णता दूर होकर चेहरे पर चमक आती हैं ।

उषः पान (Water Therapy)

सूर्योदय से पूर्व का समय उष:काल कहलाता हैं। अपनी क्षमता और प्रकृति के हिसाब से एक या दो गिलास ताजा जल पियें। जिनकों कब्ज रहता हो वे सायं काल ताम्बें के बर्तन में जल भरकर हमेशा विद्युत् की कुचालक वस्तु (प्लास्टिक, लकड़ी या कम्बल) के ऊपर रखें। खड़े होकर जल पीने से आगे चलकर पिंडलियों में दर्द की समस्या होती हैं, अत: बैठकर ही प्रात:काल उस जल को पियें। जल अशुद्ध होने की स्थिति में जल को उबालकर, छानकर, ठंडा करके पियें। जो मनुष्य सूर्योदय से पूर्व आठ अंजली जल पीता हैं, रोग और बुढ़ापा उसके पास नहीं आतें। वह सदैव स्वस्थ और युवा रहता हैं। उसकी आयु सौ वर्ष से भी अधिक होती हैं।

सिरदर्द, रक्ताल्पता, ह्रदय छिद्र, साधारण लकवा, मोटापा, गठिया, साइनोसाइटिस, दमा, गैस, अम्लपित, कब्ज, धातु विकार, वीर्य सम्बन्धी रोग, मासिक धर्म की अनियमितता, लिकोरिया, श्वेत प्रदर, बाल रोग, त्वचा रोग, रक्तचाप, नैत्र रोग, अपच, वात, पित और कफ के असंतुलन से उत्पन्न रोग आदि उष:पान से दूर होते हैं। विदेशों में इसे जल चिकित्सा (Water Theropy) के नाम से जाना जाता हैं।

मल-मूत्र का त्याग

जल पीने के बाद कुछ देर तक टहलना चाहिए। टहलने से ह्रदय रोग से बचाव होता हैं और कब्ज टूट जाता हैं। मल और मूत्र का वेग रोकना नहीं चाहिए। मल-मूत्र के वेग रोकने से नेत्र ज्योति कम हो जाती हैं। मल-मूत्र का त्याग करते समय जोर नहीं लगाना चाहिए। मल त्याग करते समय जोर लगाने से शुक्राशय पर दबाव पड़ता हैं तथा उस स्थिति में वीर्य के स्खलित होने की सम्भावना रहती हैं। मल का त्याग स्वभाविक रूप से होने देना चाहिए। मल-मूत्र का त्याग करते समय मुँह को बंद रखें, वार्तालाप न करें। मुँह बंद रखने से दांत निरोगी रहते हैं। किशोर अवस्था में मल का त्याग दो बार (प्रात; और सायं) करना चाहिए, इससे ब्रह्मचर्य का पालन करने में सहायता मिलती हैं। नहाने से पूर्व, सोने से पूर्व एवं भोजन के पश्चात् मूत्र त्याग अवश्य करना चाहिए। यह आदत आपको कमर दर्द, पथरी तथा मूत्र सम्बन्धी बीमारियों से बचाती है।

गुप्तेन्द्रिय की स्वच्छता

मल-मूत्र के त्याग के बाद गुदा को पानी से खूब अच्छी तरह धोना चाहिए। गुदा के पास वीर्य वाहक नाड़ियाँ होती हैं, ताजे जल का उपयोग करने से वीर्य की रक्षा होती हैं। स्वास्थ्य और वीर्य रक्षा के लिए मुत्रेंद्रिय तथा मलेंद्रिय की स्वच्छता का पूरा ध्यान रखना चाहिए। समय-समय पर वहां उगे बालों को साफ कर देना चाहिए, जिससे वहां पर गंदगी एकत्र होकर खुजली उत्पन्न न हो। बाल साफ करते समय ईश्वर के नाम का जप करते रहना चाहिए।

मल मूत्र त्याग के पश्चात हाथों, पैरों और मुँह को अच्छी प्रकार से धोना चाहिए। हाथों को धोने के लिए साबुन, राख अथवा मुल्तानी मिटटी का उपयोग करें।

दन्त स्वच्छता

दांतों की स्वच्छता के लिए नीम, बबूल या नीम जैसे गुणकारी अन्य किसी वृक्ष की दातौन का उपयोग करें। दातौन के उपलब्ध न होने पर पेस्ट या कोई अत्यंत महीन व कण रहित मंजन पाउडर का उपयोग करें।

पेस्ट ब्रश पर लेकर दाएं-बाएं, ऊपर-नीचे, मसूढ़ों पर सब ओर धीरे-धीरे रगड़ना चाहिए। पेस्ट करने के बाद दांतों पर अंगुली से धीरे-धीरे मालिश करें। इसके बाद मुँह धो लें। जीभ पर मैल जमा हो गया हो तो उसे जीभी का प्रयोग करके साफ कर दें।

कुछ भी खाने के बाद कुल्ला अवश्य करें। रात्रि को सोने से पहले अच्छे से कुल्ले करके मुँह की शुद्धि करना स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत लाभकारी हैं। ऐसा करने से दांत व मसूढ़े पूर्ण निरोग रहते हैं।

स्नान

शरीर की शुद्धि व आरोग्य की रक्षा के लिए स्नान करना बहुत आवश्यक हैं। हमारा शरीर हजारों रोम-छिद्रों के द्वारा श्वांस लेता हैं। स्नान न करने से त्वचा के ऊपर गंदगी, मैल और पसीना जमा होकर रोम छिद्रों को बंद कर देते हैं, जिससे शरीर में आलस्य आता हैं, खुजली एवं दाद जैसे चर्म रोग उत्पन्न होकर शरीर की कांति को नष्ट कर देते हैं। स्वस्थ रहने के लिए इन रोम छिद्रों को साफ रखना बहुत आवश्यक हैं। स्नान करने से रोम छिद्र खुल जाते हैं, जिससे रक्त परिसंचरण में सहायता मिलती हैं।

स्नान करने से पूर्व शरीर की अच्छी तरह सूखी मालिश करनी चाहिए। शरीर को दोनों हथेलियों अथवा मोटे तौलियें से अच्छी तरह रगड़ना चाहिए। सप्ताह-दस दिनों में एक बार सरसों, तिल या अन्य औषधीय तेल की मालिश करनी चाहिए। स्नान के लिए पर्याप्त मात्रा में जल लेना चाहिए। शरीर के प्रत्येक अंग को भली-भांति धोना चाहिए। पैरों के अंगूठों के पास वाली नसों का जननेन्द्रिय के साथ बहुत गहरा सम्बन्ध हैं। पैरों के अंगूठों और अँगुलियों को खूब रगड़-रगड़ कर धोना चाहिए।

नियमित रूप से स्नान सदा सामान्य शीतल जल से करना चाहिए। (जहाँ निषेध न हो)। स्नान के समय सर्वप्रथम जल सिर पर डालना चाहिए, ऐसा करने से मस्तिष्क की गर्मी पैरों से निकल जाती है। जो विवाहित है वे पहले अपने दाये कंधे पर जल डाले, इससे उनका हृदय सही रहेगा। स्नान करते समय किसी अच्छे कीटाणु नाशक साबुन का प्रयोग करना चाहिए। साबुन के स्थान पर मुल्तानी मिट्टी का प्रयोग करना भी बहुत लाभकारी होता हैं। मुल्तानी मिट्टी में विष खींचने की अपूर्व शक्ति होती हैं। स्नान के बाद शरीर को साफ तौलियें से रगड़-रगड़ कर पोंछना चाहियें। नित्यप्रति स्नान करने से वात विकार, बुढ़ापा, थकावट नहीं होती है। त्वचा सुन्दर, दृष्टि स्वच्छ एवं शरीर पुष्ट होता है।

तैरना आता हो तो नदी या तालाब में तैरकर स्नान करें। तैरकर स्नान करने से दोहरा लाभ होता हैं, तैरना एक व्यायाम भी हैं। तैरने से शरीर के सभी अंग-प्रत्यंगों का संचालन होता हैं और श्वांस-प्रश्वांस की क्रिया में गति उत्पन्न होती हैं। तैरने से छाती चौड़ी होती हैं और फेफड़े मजबूत होते हैं। उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त होता हैं।

शिश्नेन्द्रिय स्नान

मल-मूत्र के त्याग के पश्चात या स्नान करते समय कभी-कभी मूत्रेन्द्रिय को धोया करें। मुतेन्द्रिय के शिश्नमुंड के निचे एक प्रकार का सफ़ेद सा मैल एकत्रित हो जाया करता हैं, इससे उतेजना होने लगती हैं। इस स्थान के मैल को साफ करते रहना चाहिए। कभी-कभी मुतेन्द्रिय पर शीतल जल की धार डालना बहुत अच्छा होता हैं। मुतेन्द्रिय को मसलना नहीं चाहिए। मुतेन्द्रिय स्नान से कामवृत्ति का शमन होता हैं और स्वप्नदोष नहीं होता। स्त्रियों को भी

मुतेन्द्रिय पर शीतल जल की धार डालनी चाहिए। इससे उनके श्वेतप्रदर, लिकोरिया जैसे रोगों में लाभ मिलता हैं तथा उत्तेजना का शमन होकर स्वास्थ्य की रक्षा होती हैं।

व्यायाम

व्यायाम स्वास्थ्य की नींव को सुदृढ़ बनाता हैं, उसे चिर स्थाई रखता हैं। व्यायाम करने से शरीर स्वस्थ, हल्का, सुन्दर, सुदृढ़ तथा सुडौल बनाता हैं। व्यायाम से वीर्य की रक्षा होती है और मानसिक शक्तियों का विकास होता हैं। शरीर के दूषित-विजातीय अंश पसीने के रूप में बाहर निकल जाते हैं। शरीर के सारे अंगो को नई शक्ति प्राप्त होती रहती हैं।

एक वैद्य अमोध चिकित्सा के लिए प्रख्यात थे। एक दिन किसी असाध्य रोग से पीड़ित व्यक्ति उनके पास आया और अपनी व्यथा सुनाई। वैद्य ने व्यथा सुनकर उसे दो महीने की औषधि देकर कहा- "इसे अपने माथे के पसीने से गीली करके चेहरे पर प्रातःकाल लेप करना।" वह व्यक्ति वैद्य के निर्देश अनुसार माथे से पसीना निकाल कर, उस पसीने से औषधि को गीली करके चेहरे पर लेप करने लगा। जिससे उसका रोग दूर हो गया। दो महीने के पश्चात उस व्यक्ति ने वैद्य से मिलकर उस औषधि का नाम जानना चाहा, जिसके सेवन करने से वह रोग मुक्त हुआ। वैद्य ने उसे समझाया कि औषधि तो घास मात्र थी, पर उसका अनुपान पसीना था। तुम्हें पसीना निकालने में कड़ा परिश्रम करना पडा, जिसके करने से तुम्हारा रोग दूर हो गया।

व्यायाम करने से पाचन क्रिया सुदृढ़ बनती हैं तथा लिया गया आहार ठीक प्रकार पच जाता हैं। पाचन क्रिया सुदृढ़ रहने से शरीर में रोग प्रवेश नहीं कर पाते और शरीर निरोगी रहता हैं। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निवास होता हैं। जिनका शरीर स्वस्थ नहीं रहता, उनका मन अधिक विकार ग्रस्त होता हैं। शरीर में बल होने पर ही वीर्य की रक्षा होती हैं और बल मिलता हैं व्यायाम के करने से। संसार बलवानों के लिए हैं। इस संसार में सभी लोग बलवान का पक्ष लेते हैं, निर्बल का नहीं। व्यायाम के कारण ही राममूर्ति और दारा सिंह का इतना नाम हुआ तथा विश्व विजयी पहलवान गामा को इतनी ख्याति प्राप्त हुई।

एक बार गुलाम हुसैन (गामा पहलवान) से पत्रकार जैका फ्रैड ने पूछा- "आप एक हजार से भी अधिक कुश्तियां खेल चुके हैं। आपने सभी कुश्तियों में सफलता पायी हैं और आज तक हारे नहीं हैं। आपकी इस सफलता का रहस्य क्या हैं ?" गामा पहलवान ने उत्तर दिया- "मैं किसी भी महिला की ओर बुरी दृष्टि से नहीं देखता हूँ। मैं जब कुश्ती में उतरता हूँ तो गीता नायक श्रीकृष्ण का ध्यान करता हूँ और उनसे बल की प्रार्थना करता हूँ। इसीलिए हजारों कुश्तियों में से मैं एक भी कुश्ती हारा नहीं हूँ। यह इन्द्रिय संयम, अभ्यास और श्रीकृष्ण के ध्यान का परिणाम हैं।"

शरीर व मन को स्वस्थ्य और बलबान बनाये रखने के लिए व्यायाम अवश्य करना चाहिए। जिन व्यायामों में व्यायाम और मनोरंजन एक साथ होता हैं, वे ही व्यायाम ब्रह्मचर्य रक्षा में सहायक होते हैं। मन मनोरंजन चाहता हैं। व्यायाम के साथ स्वस्थ मनोरंजन होने से प्राण और मन की उमंगों की पूर्ती हो जाती हैं।

हल्की दौड़, कबड्डी, खो-खो, रस्सी कूद, वालीवाल, टेनिस, बैडमिन्टन, क्रिकेट, फुटबाल, हाँकी, योग आदि का व्यायाम अपनी इच्छा व सामर्थ्य के अनुसार करना चाहिए। दण्ड, कुश्ती आदि भारी व्यायाम हैं, ये सर्वसाधारण के लिए उपयोगी नहीं हो सकते। अधिक व्यायाम करने से आहार में अरुचि, वमन, ज्वर, श्वांस,

चक्कर आना, थकावट और खासी की शिकायते उठ सकती हैं। इसलिए व्यायाम की मात्रा और नियमिता पर ध्यान देना आवश्यक होता हैं। जब थकान होने लगे, तभी व्यायाम बंद कर देना चाहिए। जब खून का दौर सामान्य हो जाये, तब अंकुरित अनाज जैसे चना एवं दूध आदि पौष्टिक पदार्थो का सेवन करना चाहिए, जिससे शरीर को पर्याप्त पोषक तत्व मिल सकें।

आहार

उपनिषद् के अनुसार "मन अन्नमय हैं" अन्न के सूक्ष्म भाग से मन, तैजस भाग से वाणी और जलीय भाग से प्राणों को बल मिलता हैं। मन, वाणी और प्राणों की रक्षा के लिए अन्न अर्थात आहार का सेवन आवश्यक हैं।

हमारा शरीर एक रथ के समान हैं, इन्द्रियां इसके घोडें हैं, बुद्धि इसकी लगाम हैं और मन सारथी हैं। हमारे द्वारा लिये गये आहार के अनुसार ही हमारे मन का संस्कार बनता हैं। मन के संस्कार का प्रभाव बुद्धि पर पड़ता हैं, मन के अनुसार ही बुद्धि का निर्माण होता हैं। बुद्धि इन्द्रियों रूपी घोड़ों की लगाम हैं, लगाम ठीक हैं तो घोड़े अपने सही मार्ग पर चलते रहेंगे। यदि लगाम ठीक नहीं हैं तो घोड़े अपने मार्ग से भटक कर इधर-उधर दौड़ने लगते हैं। जिसके कारण रथ अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाता तथा बीच में ही खण्डित होकर नष्ट हो जाता हैं।

रथ को सुरक्षित रखकर लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए इन्द्रियों रूपी रूपी घोड़ों को नियंत्रित रखना होगा। इन्द्रिय रूपी घोड़ों की लगाम बुद्धि और मन सारथी हैं, अत: इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने के लिए मन पर विजय प्राप्त करनी होगी। मन पर विजय शुद्ध सात्विक आहार-विहार से होगी। विख्यात लोकोक्ति हैं-

"जैसा खाए अन्न वैसा होवे मन।"

आहार तीन प्रकार का होता हैं- सात्विक, राजसिक और तामसिक। सात्विक आहार में बुद्धि, बल और आरोग्य को बढ़ाने वाले मधुर व पौष्टिक पदार्थ आते हैं, जैसे- गेहूँ, चावल, अंकुरित अनाज, दालें, घी, दूध, सब्जियाँ, फल आदि आते हैं। ब्रह्मचारी को यथासंभव सदैव सात्विक आहार का सेवन करना चाहिए।

राजसिक आहार में कडवे, खट्टे, लवण युक्त, मिर्च मसालेदार, उतेजक पदार्थ आते हैं, जैसे चाट, समोसे, चाय, कुल्फी, बाजार की मिठाइयाँ, पेप्सी, लेमन, सोडा, पिज्जा, बर्गर, ज्यादा तले हुए पदार्थ आदि आते हैं।

तामसिक आहार में रस रहित, अस्वादु, अधपका और दुर्गन्ध युक्त पदार्थ आते हैं, जैसे- गुटका, तम्बाकू, खैनी, पान पराग, बीडी, सिगरेट, शराब तथा अंडा आदि आते हैं।

किशोर अवस्था में यौवन शुरू होने पर त्वचा की तैल ग्रन्थियां (सिबेसियस ग्लैंड्स) अधिक सक्रिय होकर अधिक तैल का उत्पादन करने लगती हैं, जिससे मुहांसों की समस्या उत्पन्न होती हैं। लेकिन आहार में थोड़ी सी सावधानी रखकर राजसिक और तामसिक आहार से बचकर काफी हद तक मुहांसों की समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकता हैं। राजसिक व तामसिक आहर से वीर्य पतला होता हैं, जो स्वप्नदोष का कारण बन जाता हैं।

ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए सदैव सात्विक आहार का सेवन करना चाहिए। बिना भूख के और आवश्यकता से अधिक खाया गया सात्विक आहार भी राजसिक और तामसिक प्रभाव उत्पन्न करता हैं, भूख लगने पर ही भोजन करना चाहिए। कम खाने का मतलब यह नहीं कि तुम 200 ग्राम खाते हो तो 150 ग्राम खाओ। नहीं, यदि तुम एक किलो पचा सकते हो और विकार उत्पन्न नहीं होता तो निःसंकोच एक किलों खाओ। किन्तु तुम पचा सकते हो 200 ग्राम, तो 210 ग्राम मत खाओ। जो खाओं प्रसन्नचित होकर खाओं। इससे ब्रह्मचर्य की रक्षा में सहायता मिलती है और ब्रह्मचर्य की रक्षा होने से व्यक्ति में सामर्थ्य एवं सब सदगुण सहज विकसित होते हैं। शान्तचित होकर किया गया रुखा-सूखा भोजन भी शरीर को पुष्टि व आत्मा को संतुष्टि प्रदान करता हैं।

भोजन करते समय नासिका का दाहिना स्वर (सूर्य स्वर) चलना चाहिए। दाहिने स्वर के चलने पर किया गया भोजन शीघ्र पच जाता हैं। भोजन करते समय यदि नासिका का दाहिना स्वर चालू न हो तो उसको चालू कर दें। उसकी विधि यह हैं- बायीं बगल में अपने दाहिने हाथ की की मुट्ठी रखकर बगल को जोर से दबायें अथवा बायीं करवट लेट जायें, कुछ ही देर में दायाँ नासिका स्वर चालू हो जायेगा। ठीक इसके विपरीत करने पर बायाँ नासिका स्वर (चन्द्र स्वर) चालू हो जायेगा। कोई भी पेय पदार्थ चन्द्र स्वर के चलने पर लेना चाहियें।

अपच, कब्ज, अजीर्ण, मोटापा जैसी बीमारियों से बचने के लिए भोजन के 30 मिनट पहले तथा 1 घण्टे बाद तक जल नहीं पीना चाहिए। भोजन के साथ जल नहीं पीना चाहिए। घूँट-दो घूँट ले सकते हैं। दिनभर में 3-4 लीटर जल थोड़ा-थोड़ा करके पीते रहना चाहिए। भोजन के साथ छाछ (मट्ठा) पीना अमृत गुणकारी हैं। भोजन करने के पश्चात गुड़ खाना चाहिये। भोजन के उपरान्त वज्रासन में 5-10 मिनट बैठना तथा बांयी करवट 5-10 मिनट लेटना चाहिए। भोजन के तुरन्त बाद दौड़ना, तैरना, नहाना स्वास्थ्य के बहुत हानिकारक है। भोजन करके तत्काल सो जाने से पाचनशक्ति का नाश हो जाता है, जिसमें अजीर्ण, कब्ज, अम्लपित्त जैसी व्याधियाँ हो जाती है। इसलिए सायं का भोजन सोने से 2 घन्टे पूर्व हल्का एवं सुपाच्य करना चाहिए। दूध के साथ दही, नीबू, नमक, तिल उड़द, जामुन, मूली, करेला आदि का सेवन नहीं करना चाहिए। त्वचा रोग होने की सम्भावना रहती है।

निद्रा

शरीर एवं मन को तरोताजा एवं क्रियाशील रखने के लिए औसतन 7-8 घन्टे की नींद आवश्यक है। गर्मी के अलावा अन्य ऋतुओं में दिन में सोने एवं रात्री में अधिक देर तक जागने से शरीर में भारीपन, ज्वर, जुकाम, सिर दर्द एवं अग्निमांध होता है। रात्री में सोने से पूर्व दाँतों की सफाई करके सोना चाहिए। पूर्व या दक्षिण की तरफ सिर करके, बायीं करवट लेकर सोना उतम होता हैं, इससे स्वास्थ्य ठीक रहता है तथा ठोस निद्रा आती हैं।

किशोर, युवा व आत्म कल्याण की इच्छा रखने वाले मनुष्यों को प्रातःकाल की अमृत वेला में 4 से 4:30 बजे तक उठ जाना चाहिए। किन्तु प्रात:काल 4 बजे आप तभी उठ सकते हैं जब सायंकाल 10 बजे से पूर्व सो जायें। युवाओं को 10 बजे से पूर्व सोने का तथा प्रात:काल 4 बजे उठने का अभ्यास डालना चाहिए। स्वप्नदोष

अधिकांश रात्रि के अंतिम प्रहर में प्राय: इसी समय होता हैं। इस समय उठ जाने से वीर्य की रक्षा होती हैं तथा आरोग्य, स्वास्थ्य, बल, बुद्धि, तेज, आरोग्य, स्फूर्ति, समृद्धि और दीर्घायु की प्राप्ति होती हैं।

रात्रि में शयन से पूर्व अपने किये गये कार्यों की समीक्षा कर अगले दिन की कार्य योजना बनानी चाहिए। तत्पश्चात् गहरी एवं लम्बी सहज श्वास लेकर शरीर को एवं मन को शिथिल करते हुए सात बार गायत्री मन्त्र जप करना चाहिए। शान्त मन से अपने दैनिक क्रियाकलाप, तनाव, चिन्ता, विचार सब परमात्म चेतना को सौंपकर निश्चिंत भाव से निद्रा की गोद में जाना चाहिए।

ब्रह्मचर्य रक्षा का अचूक साधन - व्यस्त रहना

यौवन-ब्रह्मचर्य की रक्षा करने के लिए मन को व्यस्त रखना अति आवश्यक हैं। मन को कभी खाली नहीं छोड़ना चाहिए। अंग्रेजी में लोकोक्ति हैं-

"An Empty mind is a devil's workshop" खाली मस्तिष्क शैतान का कारखाना। मन का कार्य है सोचना। हम मन को जिस किसी कार्य में लगाएंगे मन उसी का विचार करेगा। मन कभी विचार शून्य नहीं रहता। हमारा मन किन्हीं बुरे विचारों में भटकने न पायें, इसलिए उसे सदैव किसी न किसी रचनात्मक, समाजोपयोगी कार्य में लगाएं रखों। इससे हमारे मन में कुविचारों का प्रवेश न हो सकेगा।

मन को किसी भी कार्य में न लगाकर खाली छोड़ देंगे तो वह अनावश्यक विचार करेगा, बुरी बातें सोचेगा। विचारों का हमारे आचरण पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता हैं। जैसे हमारे विचार होगे, वैसे ही हमारा आचरण होगा। कहा जाता हैं कि-

"निठल्ले मनुष्यों को काम विकार अधिक सताता हैं। उनके संतान अधिक होती हैं।" उसका कारण स्पस्ट हैं कि- "खाली मन शैतान का घर।" उनका खाली मस्तिष्क बार-बार शैतानी की बातें सोचता रहता हैं। उनका मन बार-बार काम का शिकार होता रहता हैं।

एक बार महर्षि दयानंद जी से किसी ने पूछाः "स्वामी जी, आपको कभी कामदेव सताता है या नहीं ?"

महर्षि जी ने उत्तर दियाः "हाँ, हो सकता है कि वह कभी आया हो, परन्तु उसे मेरे मन के खाली न होने के कारण वापस लौटना पड़ा होगा।"

महर्षि दयानंद सरस्वती अपने कार्य में इतने व्यस्त रहते थे कि उनका मन इधर-उधर की बातों के लिए खाली नहीं हो पाता था। उनके सोने, जागने, खाने आदि तक का समय निशित था। यही उनके अखण्ड ब्रह्मचर्य का रहस्य था।

हे युवाओं ! अपने जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ न गँवाओ। स्वयं को किसी न किसी सृजनात्मक सत्प्रवृत्ति में संलग्न रखो। व्यस्त रहने की आदत डालो। खाली मस्तिष्क शैतान का घर। निठल्ले व्यक्ति को ही विकार अधिक सताते हैं। आप अपने विचारों को पवित्र, सात्विक व उच्च बनाओ। विचारों की उच्चता बढ़ाकर आप अपनी आंतरिक दशा को परिवर्तित कर सकते हो। उच्च व सात्विक विचारों के रहते हुए कुविचारों की दाल नहीं गलेगी। सात्विक व पवित्र विचार रखते हुए व्यस्त रहना ही यौवन रक्षा व ब्रह्मचर्य साधना का आधार है।

संगति का प्रभाव

संगती का हमारे चरित्र व व्यक्तित्व निर्माण पर सर्वाधिक प्रभाव पड़ता हैं। हमें सदैव सात्विक विचारों वालें, संयमी व बुद्धिमान मुनष्यों की संगति करनी चाहिए। कभी भूलकर भी कामुक, आवारा, असंयमी, दुर्व्यसनी, शराबी, आलसी आदि मनुष्यों को अपना मित्र नहीं बनाना चाहिए। सात्विक विचारों वाले मित्रों से हमें इन्द्रिय संयमी रहने की प्रेरणा मिलेगी, जबकि कुसंग से इन्द्रिय संयम खण्डित ही नहीं होगा बल्कि समाप्त भी हो जायेगा। जैसी हमारी संगती होगी उसी के अनुरूप हमारे विचार, चरित्र और व्यक्तित्व का निर्माण होगा।

"पानी पीएं छान के मित्र बनाएं जान के।"

मित्रों का चयन अच्छी तरह देखभाल करके करना चाहिए। मित्र बनाने से पहले यह चिंतन कर लें कि हमारा वास्तविक हितचिन्तक कौन हैं ?

वह कुसंगी जो अपवित्र और फूहड़ बातों से हमें हंसाता हैं। हमारे साथ सैर-सपाटे पर जाता हैं, हमें नाच-रंग दिखाने सिनेमा, क्लब, पब में ले जाता हैं और नाना क्रियाओं द्वारा हमारे अन्दर कुसंस्कार उत्पन्न करता हैं। वास्तव में ऐसा व्यक्ति हमारा मित्र न होकर शत्रु होता हैं। ऐसे कुसंगी मित्रों से प्रयत्नपूर्वक बचना चाहिए।

अश्लील फिल्मों, गंदे उपन्यासों एवं कुसंग ने आज के नौजवानों के चरित्र-बल का सत्यानाश कर दिया है। सावधान ! इन बुराइयों से बचो, संयम की महिमा समझो एवं सयमी-सदाचारी पुरुषों का संग करो ताकि पुनः अपने पूर्वजों जैसा आत्मबल, चरित्र-बल एवं नैतिक बल अर्जित कर सको।

सच्चा मित्र वह होता हैं जो हमारे उत्तम विचारों को दृढ़ करें। उच्च व महान कार्यों में सहायता दें, हमारा साहस बढ़ायें। कुपथ पर चलने से रोकें, सचेत करें। हमारे दोष व त्रुटियों को हमारे सामने व्यक्त कर हमें उनसे बचायें। हमारे हतोत्साहित होने पर हमें उत्साह प्रदान करें। हमें उत्तमतापूर्वक कार्य की प्रेरणा प्रदान करें। संगती के अनुसार ही हमारे संस्कार बनते हैं। जैसे हमारे संस्कार होंगे, उसी के अनुसार ही हमारे चरित्र और व्यक्तित्व का निर्माण होगा।

एक ही स्वाति बूंद केले के गर्भ में पड़कर कपूर बन जाती है, सीप में पड़कर मोती बन जाती है और अगर सांप के मुंह में पड़ पड़ जाए तो विष बन जाती है। पारस के छूने से लोहा सोना बन जाता है, पुष्प की संगति में रहने से कीड़ा भी देवताओं के मस्तक पर चढ़ जाता है। रत्नाकर नाम के डाकू थे। बाद में वही डाकू महर्षि नारद की संगति से तपस्वी बनकर महर्षि वाल्मीकि नाम से प्रसिद्ध हुए। इसी प्रकार मुंशीराम नामक भयंकर विषयाक्त व्यक्ति महर्षि दयानन्द की संगति पाकर महात्मा श्रद्धानन्द बन गया। उत्तम व्यक्तियों के संपर्क में आने से सदगुण स्वयं ही आ जाते हैं। गंदे जल का नाला भी पवित्र पावन भागीरथी में मिलकर गंगाजल बन जाता है। किसी ने ठीक ही कहा है – जैसी संगति बैठिए तैसी ही फल दीन।

हमारी उन्नति इस बात पर बहुत निर्भर है कि हमारी संगति कैसी है। यदि हम कलाकार बनना चाहते हैं तो हमें कलाकारों के साथ अपना समय गुजारना चाहिए। यदि हमारे अंदर एक डॉक्टर बनने की इच्छा है तो

हमें उन लोगों की संगति करनी चाहिए जो चिकित्सा के क्षेत्र से जुड़े हैं। यदि हम अपने जीवन को सद्गुणों से भरना चाहें तो हमें चाहिए कि हम चरित्रवान और सदाचारी लोगों का संग करें। यदि हम चाहते हैं कि हमें अपना आत्मिक विकास करना है तो हम ऐसे लोगों की सोहबत करें जो आध्यात्मिक रूप से उन्नत हों। हमारा जीवन अत्यंत मूल्यवान है। हमें अपने जीवन के परम लक्ष्य को पाना है। आत्मिक उन्नति के साथ - साथ हम निष्काम - भाव से दूसरों की मदद भी कर सकते हैं। ऐसे लोगों की संगती करना , जो हमारा ध्यान नीच वृति की ओर ले जाकर हमें हमारे लक्ष्य से दूर कर देते हैं, अपने बहुमूल्य जीवन को व्यर्थ करना है। हमें यह निर्णय करना चाहिए कि हम जीवन में क्या पाना चाहते हैं। एक बार निर्णय लेने के बाद फिर हम उस लक्ष्य को पाने में जुट जाएं। यदि हम ऐसे लोगों की संगति करेंगे जिनका लक्ष्य वही है जो हमारा है तो हम और तेजी से अपने जीवन के लक्ष्य की ओर बढ़ सकेंगे।

स्वाध्याय

स्वाध्याय का शाब्दिक अर्थ है- "स्वयं का अध्ययन करना"। यह एक वृहद संकल्पना है जिसके अनेक अर्थ होते हैं। जीवन-निर्माण, ज्ञान-विज्ञान और सुधार संबंधी पुस्तकों का पढ़ना, परमात्मा और मुक्ति की ओर ले जाने वाले ग्रंथों वेद, उपनिषद् व गीता आदि अन्य सद्ग्रन्थों का अध्ययन, श्रवण, मनन, चिंतन आदि करना स्वाध्याय कहलाता है। आत्मचिंतन का नाम भी स्वाध्याय है। अपने बारे में जानना और अपने दोषों को देखना भी स्वाध्याय है।

स्वाध्याय के बल से अनेक महापुरुषों के जीवन बदल गए हैं। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उनके जीवन को देखों तो आपको उन पर किसी न किसी सत्साहित्य की चाप मिलेगी। धर्म व राष्ट्रभक्ति पूर्ण साहित्य पढकर ही लोकमान्य तिलक, वीर सावरकर, मादाम कामा, श्यामजी कृष्ण, लाला हरदयाल, राजा महेन्द्र प्रताप, सुभाष चन्द्र बोस, चंद्रशेखर आजाद, भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल, महर्षि अरविन्द घोस जैसे रत्न अपने जीवन को राष्ट्रहित में समर्पित कर पायें। शुद्ध, पवित्र और सुखी जीवन जीने के लिए सत्संग और स्वाध्याय दोनों आधार स्तंभ हैं।

स्वाध्याय का जीवन निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान है। स्वाध्याय से व्यक्ति का जीवन, व्यवहार, सोच और स्वभाव बदलने लगता है। उत्तम व अच्छी पुस्तकों का अध्ययन करने से हमारे विचारों एवं संस्कारों में पवित्रता, वीरता और दृढ़ता आती हैं। विचारों की दृढ़ता से ही हमारे जीवन में सात्विकता आती हैं। जीवन में सात्विकता होने पर इन्द्रियों का संयम करना सहज हो जाता हैं तथा विवेक जागृत होकर आत्म साक्षात्कार करा देता हैं।

इसके विपरीत जो मनुष्य गन्दी, विकारी और कामोतेजक पत्र-पत्रिकाएँ व अश्लील फ़िल्में देखते हैं, उनके अंदर कामुकता के भाव संस्कार उत्पन्न हो जाते हैं। उनका मन सदैव कामुकता के चिंतन में उलझा रहता हैं और वे अपने इन्द्रिय संयम को खोकर चरित्र की रक्षा करने में असमर्थ रहते हैं।

किशोर अवस्था बैठने का नहीं, अपितु जीवन के लक्ष्य को साधने का स्वर्णिम काल हैं। प्रेरणा से लक्ष्य प्राप्ति की कामना उत्पन्न होती हैं और कामना पूर्ति की तीव्र इच्छा ही संकल्प होता हैं। जब संकल्प में नियमित पुरुषार्थ जुड़ता हैं, तो मनुष्य लक्ष्य को प्राप्त कर लेता हैं। आधुनिक शिक्षा-दीक्षा ग्रहण करों, नवीनतम तकनीक का प्रयोग करों, लेकिन अपने नैतिक, सांस्कृतिक मूल्यों एवं उसकी सद्परम्पराओं को सुरक्षित तथा गतिशील अवश्य रखों।

हमें अपने कैरियर का विशेष ध्यान रखते हुए प्रातःकाल स्नानादि के पश्चात या रात्रि में सोते से पूर्व कुछ समय कोई न कोई आध्यात्मिक पुस्तक पढनी चाहिए। विद्यार्थियों के लिए गीता का स्वाध्याय करना सर्वोत्तम होता हैं। इससे हमें जीवन जीने की कला का ज्ञान प्राप्त होगा। पुस्तक के सत्वगुणी विचार मन में घूमते रहेंगे और हमारा मन विकार ग्रस्त होने से बचा रहेगा।

प्रेम, भक्ति और काम

काम, प्रेम और भक्ति का आपस में बहुत गहरा सम्बन्ध हैं। ये तीनों एक ही ऊर्जा के तीन रूप या तीन स्तर हैं। इनमें से सबसे निचला स्तर काम हैं, मध्यम स्तर प्रेम का हैं और सबसे ऊँचा स्तर भक्ति का हैं। इन तीनों का योग मनुष्य में बराबर ही रहता हैं। सामान्यतया किसी के भी प्रति प्रेम, प्रेम हैं और परमात्मा के प्रति प्रेम भक्ति हैं। प्रेम और भक्ति ऊर्जा का ऊर्ध्वगमन हैं, ऊपर की ओर उठ जाना हैं, तथा काम ऊर्जा का अधोगमन हैं, नीचे की ओर बह जाना हैं।

प्रेम और भक्ति एक दुसरे के अधिक निकट हैं, वे एक ही शाखा के दो भाग हैं। जबकि काम एक अलग ही शाखा हैं। जिन मनुष्यों में काम अधिक होता हैं, उनमें प्रेम और भक्ति वाला पक्ष कम होता हैं तथा जिनमें प्रेम ओर भक्ति वाला पक्ष अधिक होता हैं, उनमें काम कम होता हैं, वे कामवासना के द्वशी नहीं होते।

प्रेम, भक्ति और काम में से किसी को भी किसी दूसरे में रूपान्तरित किया जा सकता हैं। ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए प्रेम और भक्ति को बढ़ाना बहुत ही लाभकारी होता हैं। प्रेम और भक्ति ब्रह्मचर्य के सूत्र हैं। काम की ऊर्जा ही अंततः प्रेम या भक्ति में रूपान्तरित होती हैं।

उदाहरणार्थ मान लीजिए किसी मनुष्य में 45 प्रतिशत काम हैं, 35 प्रतिशत प्रेम और 20 प्रतिशत भक्ति हैं, जिसका कुल योग 100 प्रतिशत हैं। यदि उस मनुष्य में 15 प्रतिशत काम की वृद्धि हो जाती हैं तो 15 प्रतिशत ही प्रेम या भक्ति की कमी हो जाएगी। इसी प्रकार यदि उसमें 10 प्रतिशत प्रेम की वृद्धि हो जाती हैं तो 10 प्रतिशत ही काम की कमी हो जाएगी या 25 प्रतिशत भक्ति की वृद्धि हो जाती हैं तो 25 प्रतिशत ही काम कम हो जायेगा। तात्पर्य यह हैं कि मनुष्य में कुल योग 100 प्रतिशत ही रहेगा। प्रेम बढे या भक्ति परन्तु काम ही कम होगा। जब काम बढेगा तो प्रेम या भक्ति कोई सा एक या दोनों उतने ही कम हो जायेगे।

अतः ब्रह्मचर्य की उपलब्धि की उपलब्धि के लिए मनुष्य के जीवन में प्रेम या भक्ति की वृद्धि करना बहुत ही लाभकारी सिद्ध होता हैं। वर्तमान समय के किशोर व युवा आयु वर्ग के लड़के-लड़कियों में प्रेम का

प्रचलन बहुत तेजी से बढ़ रहा हैं, परन्तु वास्विकता यह हैं कि वह प्रेम होता ही नहीं। किशोर-युवावस्था में विपरीत लिंग (सेक्स) के प्रति शारीरिक आकर्षण होता है, जो की स्वाभाविक भी हैं। किशोर-युवान की शारीरिक और मानसिक परिपक्वता इतनी नहीं होती कि वह प्रेम और आकर्षण का अंतर समझ सकें। कुछ समय बाद वह आकर्षण कम हो जाता हैं तो ऐसे प्रेमियों का जीवन प्रेम के स्थान पर क्लेशों से युक्त हो जाता हैं।

सच्चा प्रेम त्याग, बलिदान, शौर्य, उच्च आदर्शों एवं इन्द्रियों का संयम- सच्चचरित्रता जैसे मानवीय मूल्यों, सद्गुणों का आदर्श लेकर उत्पन्न होता हैं। उनमें वासना का कोई स्थान नहीं होता। सच्चा प्रेम सदैव नि:स्वार्थ होता हैं। यह प्रेम परमात्मा, धर्म, संस्कृति, राष्ट्र, प्रकृति, माता-पिता, गुरु, भाई, बहन आदि किसी के भी प्रति हो सकता हैं।

प्रेम या भक्ति का जो विकास हैं, वह काम की ऊर्जा का ही रूपांतरण हैं। ब्रह्मचर्य की उपलब्धि के लिए प्रेम अथवा भक्ति में वृद्धि करना एक बहुत ही प्रबल साधन हैं। मनुष्य में प्रेम या भक्ति की सम्भावना बढ़नी चाहिए- वृक्षों के प्रति, पक्षियों के प्रति, पशुओं के प्रति, प्रकृति के प्रति, ध्यान के प्रति, विज्ञान के प्रति, ब्रह्माण्ड के प्रति, धर्म के प्रति, राष्ट्र के प्रति, संस्कृति के प्रति, परमात्मा के प्रति, माता-पिता के प्रति, गुरु के प्रति आदि-आदि के प्रति हमारा प्रेम, हमारी भक्ति बढ़नी चाहिए।

प्रेम जितना विस्तार पाता हैं, भक्ति जितनी बढती हैं, उतनी ही जीवन में काम की सम्भावना कम होती चली जाती हैं। प्रेम और भक्ति दोनों मिलकर उस द्वार को खोल देते हैं जो ध्यान का, अस्तित्व का द्वार हैं।

प्रेम, भक्ति और ध्यान का योग हो जाये तो परमात्मा उपलब्ध हो जाता हैं। और उस उपलब्धि से जीवन में ब्रह्मचर्य फलित होता हैं। फिर उन्हें ब्रह्मचर्य की साधना के लिए अन्य साधनों की आवश्यकता ही नहीं रहती, उनका ब्रह्मचर्य स्वत: ही सिद्ध हो जाता हैं। फिर उनकी ऊर्जा एक नयें ही मार्ग से ऊपर चढने लगती हैं। फिर वह नीचे की ओर बहकर, बाहर निकलकर व्यर्थ नहीं हो पाती। फिर वह भीतरी मार्गो पर गति करने लगती हैं। उसका एक ऊर्ध्वगमन, एक ऊपर की ओर यात्रा शुरू होती हैं।

सृजनात्मक सत्प्रयोजनों के लिए किये जाने वाले त्याग-बलिदान में जो भाव-संवेदना काम करती है उसे भी इसी शक्ति का ऊर्ध्वगमन कह सकते है। अध्यात्म, साहित्य, संगीत, कला, विज्ञान की विभिन्न विधाओं के रूप में हम दिन-प्रतिदिन जो कुछ भी देखते हैं, वह भी काम शक्ति का परिष्कृत और प्रखर रूप है।

कामतत्व की उच्चस्तरीय परिणति वह है, जो भावसंवेदनाओं की उत्कृष्टता कोमलता, करुणा के रूप में प्रस्फुटित होती है। इसे ईश्वर के साथ, विराट् ब्रह्म के साथ, नियोजित करने पर उसका स्वरूप उस भक्त जैसा बन जाता है जिसका इतिहास के पृष्ठों में ध्रुव, ऋषि कणाद, रामकृष्ण परमहंस, आचार्य शंकर, महर्षि अरविन्द, महर्षि दयानन्द, भक्त शिरोमणि मीरा, सूरदास और तुलसीदास आदि के रूप में उल्लेख है। इनकी सारी कामवासना भक्ति में रूपान्तरित हो गयी थी और उन्होंने स्वत: ही ब्रह्मचर्य की अवस्था को पा लिया था। फिर उस ऊर्जा का सृजन हुआ मानव सेवा, समाज सेवा, राष्ट्र सेवा, धर्म सेवा, विज्ञान सेवा, प्रभू सेवा की चौपाइयों-दोहों और भिन्न-भिन्न प्रकार के साहित्य आदि-आदि में।

ब्रहमचर्य एवं एकाग्रता की सामर्थ्य

जीवन में संयम की आवश्यकता सभी को है। चाहे बड़ा वैज्ञानिक हो या दार्शनिक, विद्वान हो या बड़ा उपदेशक, सभी को संयम की आवश्यकता है। स्वस्थ रहना हो तब भी ब्रहमचर्य की आवश्यकता है, सुखी रहना हो तब भी ब्रहमचर्य की आवश्यकता है और सम्मानित रहना हो तो भी ब्रहमचर्य की आवश्यकता है।

जो ब्रहमचारी रहता है, वह आनंदित रहता है, निर्भीक रहता है। उसके संकल्प में बल होता है, उसका उद्देश्य महान होता हैं। उसमें संसार को हिलाने का सामर्थ्य होता है। ब्रहमचारी असंभव कार्य को भी संभव कर सकता हैं। भीष्म पितामह के जीवन को देखें, महाभारत युद्ध के समय उनकी आयु 450 वर्ष थी। इस आयु में भी उनमें अथाह सामर्थ्य शक्ति थी।

महाभारत के युद्ध में भगवान श्रीकृष्ण ने शास्त्र न उठाने का व्रत लिया था। उन्होंने कहा था कि- "मैं युद्ध में शास्त्र नहीं उठाऊँगा" लेकिन भीष्म ने ब्रहमचर्य के सामर्थ्य के बल पर भगवान माने जाने वाले श्रीकृष्ण को अपना व्रत भंग करने के लिए बाध्य कर दिया। भगवान श्रीकृष्ण को अर्जुन की रक्षा करने के लिए रथ का पहिया लेकर भीष्म की ओर दौड़ना पड़ा। ब्रहमचर्य के कारण ही भीष्म मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकें। भीष्म ने स्वेच्छा से दिन व समय निश्चित करके सूर्य के उतरायण होने पर अपना शरीर छोड़ा।

ब्रहमचर्य के कारण ही स्वामी विवेकानंद को इतनी प्रसिद्धि प्राप्त हुई। ब्रहमचर्य के पालन करने से एकाग्रता की सिद्धि प्राप्त होती हैं। स्वामी विवेकानंद को पढने की बहुत लग्न थी। वे जो एक बार पढ़ लेते थे, वह उन्हें सर्वदा स्मरण हो जाता था।

स्वामी विवेकानन्द हृषिकेश के बाद मेरठ आये। मेरठ में स्वामी जी अपने शिष्य अखंडानन्द जी के द्वारा स्थानीय पुस्तकालय में से पुस्तकें मंगवाते और पढकर दुसरे दिन ही वापस पहुंचवा देते थे।

एक बार विवेकानन्दजी ने प्रसिद्ध विचारक एवं दार्शनिक सर जॉन लबाक की पुस्तकें पढ़ने हेतु मँगवायीं। उन्होंने एक ही दिन में सब पुस्तकें पढ़ लीं। दूसरे दिन अखंडानंद जी वे पुस्तकें जमा करवाने ले गये तब ग्रंथपाल को विस्मय हुआ क्योंकि पिछले कई दिनों से अखंडानंदजी बड़ी-बड़ी पुस्तकें पढ़ने के लिए ले जाते एवं दूसरे दिन पुनः जमा करवा देते। ग्रंथपाल ने अखंडानंद जी से पूछाः "महाशय ! आप पुस्तकें पढ़ते हैं या केवल उनके पन्ने पलटकर ही वापस कर देते हैं ? प्रतिदिन मुझसे अलग-अलग पुस्तकें ढुँढवाकर मेरा दम निकाल देते हैं।"

यह बात स्वामी विवेकानन्द के पास पहुँची तब वे स्वयं पुस्तकालय में आये एवं उन्होंने विनम्रतापूर्वक ग्रंथपाल से कहाः "अखण्डानन्द जी प्रतिदिन मेरे लिये पुस्तकें लाते हैं। मैं पुस्तकें पूरी की पूरी पढ़कर दूसरे दिन उन्हें जमा कराने के लिए वापस भेजता हूँ। क्या आपको शंका होती है कि मैं पढ़े बिना ही पुस्तकें वापस भेजता हूँ ?"

ग्रंथपाल ने कहाः "स्वामी जी ! सर जॉन लबाक जैसे गहन तत्वचिंतक की पुस्तकें एक ही दिन में कैसे पढ़ी जा सकती हैं ? इसे मैं नहीं मानता।"

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहाः "मैंने एक ही दिन वे सब पुस्तकें पढ़ डाली हैं फिर भी आपको शंका हो तो उनकी पुस्तकों में से चाहे जिस विषय पर मुझसे कोई भी प्रश्न पूछ सकते हैं।"

ग्रंथपाल के मस्तिष्क में यह बात नहीं उतर पाई। विवेकानंदजी वास्तव में पुस्तकें पढ़ते हैं कि नहीं, इसकी जाँच करने के लिए ग्रंथपाल उन पुस्तकों में से एक के बाद एक प्रश्न पूछने लगा। विवेकानन्दजी फटाफट उनके उत्तर देने लगे। इतना ही नहीं, प्रश्न का उत्तर पुस्तक के किस पृष्ठ पर हैं, यह भी बताने लगे।

ग्रंथपाल उन्हें फटी आँखों देखता रह गया ! वह अत्यन्त आश्चर्य में डूब गया ! विवेकानन्दजी की मेधावी स्मृतिशक्ति एवं उनके ज्ञान के प्रति उसे असीम श्रद्धा हुई। उसने प्रणाम करके कहाः "स्वामी जी ! आपकी बात को सत्य माने बिना आपके साथ मैंने जो संशययुक्त व्यवहार किया, उसके बदले में क्षमा माँगता हूँ। वास्तव में आप कोई महान योगी पुरुष हैं..... परन्तु मुझे यह समझाइये कि इतनी शीघ्रता से पुस्तकें पढ़कर उसे आप अक्षरशः याद कैसे रख लेते हैं ?"

विवेकानन्द जी ने कहाः "यह तो बिल्कुल सामान्य बात है। छोटा बालक पहले एक-एक अक्षर अलग-अलग करके पढ़ता है। फिर समझदार होता है तब पूरे शब्द पढ़ता है। बाद में पूरे वाक्य फटाफट पढ़ लेता है।

पढ़ा हुआ पाठ याद रखने के लिए एकाग्रता की आवश्यकता है। एकाग्रता प्राप्त करने के लिए इन्द्रिय संयम चाहिए। संयम न हो तो मन की शक्तियाँ बिखर जाती हैं और इन सबकी नींव में सबसे महत्वपूर्ण साधना है ब्रह्मचर्य। भैया ! यह सब ब्रह्मचर्य से ही संभव बनता है। आपको मेरी स्मरणशक्ति चमत्कारिक लगती है परन्तु इसमें कुछ भी चमत्कार नहीं है। यह सब ब्रह्मचर्य का ही प्रताप है। इसका पूरा यश ब्रह्मचर्य को ही जाता है।"

विवेकानन्दजी की बात सुनकर ग्रंथपाल के हृदय में उनके प्रति अहोभाव जाग उठा। वह स्वामीजी के चरणों में नतमस्तक होकर उनका भक्त बन गया।

ब्रह्मचर्य के पालन से मन की एकाग्रता हासिल की जा सकती है और मन की एकाग्रता सिद्ध हो जाये फिर अन्य शक्तियाँ भी अपने-आप विकसित होने लगती हैं। संयम बड़ी चीज है। जो संयमी है, सदाचारी और अपने परमात्मभाव में है, वही धर्मात्मा बनता है। जो विषय-विलास में गरकाब हो जाता है, वही दुरात्मा बनता है। लेकिन जो संयम करके परब्रह्म परमात्मा को 'मैं' रूप में जान लेता है वह महान आत्मा हो जाता है, महात्मा हो जाता है। ब्रह्मचर्य बुद्धि में प्रकाश लाता है, जीवन में ओज-तेज लाता है। ब्रह्मचर्य ऊँची समझ लाता है कि: "अपनी आत्मा ब्रह्म है, उसको पहचानना ही हमारा लक्ष्य है।

वर्तमान का सदुपयोग - सुखद भावी जीवन की प्रत्याभूति (गारंटी)

मानव जीवन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य हैं- वर्तमान का सदुपयोग करना। वर्तमान समय के प्रत्येक क्षण का सद्पयोग कर परिश्रम के साथ आगे बढ़ने वाला व्यक्ति ही जीवन में सफलता के शिखर तक पहुंच पाता है। जो अपने वर्तमान को उज्जवल बनाता है, उसका भूतकाल और भविष्य दोनों उज्जवल हो जाते है। वर्तमान ही सदैव प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है। तीनों कालों में सर्वाधिक महत्व वर्तमान का हैं। वर्तमान को सुधारने की आवश्यकता है इसीलिए जीवन के प्रत्येक पल का सदुपयोग करें।

भूतकाल की बातों और भविष्य की कल्पनाओं में उलझे रहने से कुछ हाथ नहीं लगता। भूतकाल की घटनाओं की, कार्यों की निष्पक्ष समीक्षा करके, उनसे सीख लेकर, हम भविष्य की कार्य योजना बना सकते हैं। लेकिन कार्य योजना की सफलता के लिए आवश्यक हैं कि हम अपने कार्य के प्रति सौ प्रतिशत समर्पित होकर वर्तमान समय का सदुपयोग करते उस कार्य को करें। वर्तमान अटल हैं। समय के मूल्य को पहचाने, बीत गया समय लौटकर वापस नहीं आता।

"बीती को बिसराई के आगे की सुधि लें।"

हमारे भीतर छिपी हुई शक्तियों को विकसित करने के लिए हमारे पास समय चाहिए और समय का सदुपयोग करने की तकनीक चाहिए। समय देकर आप संसार की सब चीजें प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन संसार की सब चीजें न्यौछावर करके भी आप बीता हुआ समय नहीं पा सकते। अत: सावधान रहें, व्यर्थ के चिंतन और कपोल कल्पनाओं में अपना समय नष्ट न करें। जो मनुष्य अपने समय को व्यर्थ में नष्ट करता हैं, समय उसे नष्ट कर देता हैं। वर्तमान समय के प्रत्येक क्षण का सदुपयोग करें।

जोशुआ लेवमेन बालकपन से ही बहुत महत्वाकांक्षी था। एक बार उसने भावी जीवन के संदर्भ में अनेकों योजनाएँ बनाई तथा उन योजनाओं को लेकर विद्वान युकाची के पास गया। जोशुआ ने युकाची से पुछा- "वह अपनी इन भावी योजनाओं को पूरा करने के लिए क्या तैयारी करें ?"

युकाची ने उन योजनाओं की सूची को ध्यानपूर्वक पढ़ा और मुस्कराते हुए उसे सूची वापस लौटा दी। उन्होंने कहाँ- "बालक इन सब योजनाओं में सबसे प्रमुख, सबसे पहली योजना का तो कही नाम भी नहीं हैं, उसके बिना तुम्हारा भावी जीवन के बारे में सोचना व्यर्थ हैं।"

जोशुआ ने अचम्भित होकर पुछा- "सबसे पहली योजना, वह योजना क्या हैं ?"

युकाची ने कहा- "अपने चरित्र का निर्माण व वर्तमान का सदुपयोग, जिसके बिना कभी कोई व्यक्ति न बड़ा बन सकता हैं और न बड़ा काम कर सकता हैं।"

जो बीत गया सो गया, जो आने वाला है वह भविष्य के गर्भ है। वर्तमान हमारे हाथ में है। यदि हम चाहें तो उसका सदुपयोग करते हुए अपने चरित्र का निर्माण करके इस जीवन के उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं।

उतिष्ठत जाग्रत प्राप्त वरान्निबोधत।
उठों, जागों और अपने लक्ष्य की ओर बढ़ चलों।

कुछ स्वास्थ रक्षक औषधियां

1. वीर्य रक्षक चूर्ण : सूखे आंवलों को लेकर उनके बीज अलग निकाल दें। आंवलों को लेकर उनका चूर्ण बना लें। बाजार से आंवलों का तैयार चूर्ण भी ला सकते हैं। जितना चूर्ण हो उससे दुगुनी मात्रा में मिश्री का चूर्ण उसमें मिला दें। एक चम्मच चूर्ण प्रात:काल एक गिलास पानी में भिगोकर रखें और रात्रि में सोने से आधा घंटा पूर्व पी लें। इसी प्रकार रात्रि को एक चम्मच चूर्ण भिगोकर रखें और प्रात:काल उष:पान के रूप में पी लें।

इस चूर्ण को अपनी इच्छा अनुसार एक समय भी पी सकते हैं। चाहे तो रात्रि को सोने से आधा घंटा पूर्व एक चम्मच चूर्ण बिना भिगोये भी पानी के साथ ले सकते हैं।

यह वात-पित्त-कफ के दोष को मिटाता हैं। वीर्य को गाढ़ा करके स्वप्नदोष से रक्षा करता हैं। कब्ज को दूर करता हैं। यह उनके लिए भी लाभकारी हैं जिन्हें स्वप्नदोष नहीं होता। यह स्त्रियों के श्वेतप्रदर जैसे रोगों में भी लाभदायक हैं। इसके सेवन से उनके स्वास्थ्य की रक्षा होती हैं।

2. वट (बरगद) का 15-20 बूँद ताजा दूध एक बताशे में डालकर प्रात:काल खाली पेट खा लें। इसे नियम पूर्वक 40 दिन तक खाना चाहियें। यह वीर्य को पुष्ट करके स्वप्नदोष दूर करता हैं।

3. बबूल (कीकर) की गोंद को घी में भून लें। भूनी हुई गोंद में बराबर खांड मिलाकर प्रात:काल 6 ग्राम मात्रा में उबालकर ठंडा किये गए दूध के साथ लें। यह वीर्य को पुष्ट करके स्वप्नदोष को दूर करता हैं।

4. शीशम के 8-10 पत्ते व मिश्री 20-25 ग्राम दोनों को लेकर अच्छी तरह पीसकर या कूटकर पानी के साथ प्रात:काल खाली पेट खा लें। इसके सेवन से पुरुषों के स्वप्नदोष व प्रमेह आदि रोग दूर हो जाते हैं तथा स्त्रियों के श्वेतप्रदर व मासिक धर्म की अनियमितता आदि रोग दूर हो जाते हैं। 7-8 दिन में ही आपको लाभ मिलना शुरू हो जायेगा। शीशम अत्यन्त शीतल होती हैं, अत: इसका सेवन अधिक लम्बे समय तक न करें।

5. चन्द्र प्रभावटी धारोष्ण दूध के साथ सेवन करने से स्वप्नदोष दूर हो जाता हैं। इससे सौन्दर्य में निखार आता हैं।

6. अश्वगंधा, शतावर और गोखरू, इन तीनों को सामान मात्रा में लेकर महिन चूर्ण बनाकर रख लें। इस चूर्ण को 4-5 ग्राम मात्रा में प्रात: खाली पेट और रात्रि में सोते समय शहद में मिलाकर चाट लें। शहद इतना लें कि चूर्ण भली भाति मिल जायें। इसके ऊपर एक गिलास मीठा और बिल्कुल ठंडा किया हुआ दूध पी लें। इसके सेवन से पेशाब के साथ धातु जाना जैसे धातु विकार दूर होते हैं तथा आरोग्य की प्राप्ति होती हैं।

7. घी में भुना हुआ बबूल का गोंद 200 ग्राम, छाया में सुखाये हुए शीशम के पत्ते 100 ग्राम, सेमर की मूसली 100 ग्राम और मिश्री 200 ग्राम, सबको अलग अलग कूट-पीसकर चूर्ण बनाकर रख लें। मात्रा 6 से 10 ग्राम चूर्ण, मिश्री युक्त गाय के दूध के साथ प्रातः सायं लें। इसके सेवन करने से स्वप्नदोष तथा हर प्रकार के धातु विकार दूर होते हैं।

8. सफेद मूसली, कबाब चीनी, गिलोय का सत्व - इन तीनो को समान मात्रा में लेकर चूर्ण बना लें। बाजार से आंवलो का तैयार चूर्ण लाकर रख लें। रात्रि को आंवलों का एक चम्मच चूर्ण एक गिलास पानी में भिगोकर रख दें। प्रात:काल उस पानी को छानकर, औषधि को 2 से 4 ग्राम मात्र में उसी पानी के साथ खा लें। यह वीर्य की उष्णता को दूर करके धातु को पुष्ट करती हैं, जिससे स्वप्नदोष दूर हो जाता हैं।

9. भुनी फिटकरी 60 ग्राम, पिसी हल्दी 20 ग्राम, त्रिफला चूर्ण 20 ग्राम तथा गेरू 20 ग्राम। इन चारों पदार्थों को कूट-पीसकर छानकर रख लें। मात्रा 3 से 5 ग्राम तक लें और उसमें 10 ग्राम मिश्री मिलाकर ताजे जल के साथ दिन में तीन बार सेवन करें। इसके प्रयोग से कुछ ही दिनों में कठिन से कठिन तथा अत्यंत वृद्धि को प्राप्त स्वप्नदोष भी दूर हो जाता हैं।

10. अशोकारिष्ट 2 से 3 चम्मच समान मात्रा में पानी मिलाकर दिन में तीन बार सेवन करते रहने से किशोरियों के मासिक धर्म सम्बन्धी रोग दूर हो जाते हैं। इससे सौन्दर्य में निखार आता हैं व उन्हें शक्ति मिलती हैं।

11. प्रात: सायं एक-एक केला दूध में मथकर 6 ग्राम देशी गाय के घी के साथ खाने से आठ दिन में ही स्त्रियों के रक्तप्रदर रोग में लाभ मिलता है।

12. कथीरिया गोंद रात को पानी में भिगो दें, प्रात: मिश्री मिलाकर सेवन करने से प्रदर-प्रमेह-गरमी नष्ट हो जाती हैं।

13. अश्वगंधा 200 ग्राम, विदारीकन्द 100 ग्राम, वंशलोचन 50 ग्राम तथा शतावर 50 ग्राम, इन सभी को कूट पीसकर महीन चूर्ण बना लें। फिर इसमें 200 ग्राम मिश्री पीसकर मिला लें। प्रतिदिन दोनों समय खाना खाने के बाद 5 से 10 ग्राम मात्रा में दूध या पानी के साथ खा लिया करें। यह वीर्य आदि सप्त धातुओं की पुष्टि करता हैं। शारीरिक-मानसिक बल की वृद्धि करता हैं। दुबलापन दूर करता हैं, वजन बढ़ाता हैं। कद वृद्धि व स्मरण शक्ति को बढ़ाता हैं।

14. शंखपुष्पी, जटामाशी और ब्रह्मी को समभाग लेकर महीन चूर्ण बना लें। इसमें से 1 ग्राम चूर्ण को शहद के साथ प्रात: खाली पेट या रात्रि में सोने से आधा घंटा पहले लेने से स्मरण शक्ति में वृद्धि होती हैं। मस्तिष्क को शक्ति मिलती हैं व नींद अच्छी आती हैं।

15. गिलोय, अपामार्ग, शंखपुष्पी, ब्रह्मी, मीठी बच, सौठ, वायविडंग और शतावर। इन सभी आठों औषधियों को बराबर-बराबर भाग लेकर कूटकर चूर्ण बना लें, तदन्तर गोघृत में मिलाकर उसकी आठ-आठ आने भर की 44 दिन के लिए 44 गोलियां बना लें और इस हयग्रीव मंत्र -

ॐ ऐं ह्रीं ह्रीं हयग्रीवाय नमों मां विद्या देहि-देहि बुद्धि वर्द्धय हुं फट् स्वाहा

को प्रतिदिन यम-नियम का पालन करते हुए कम से कम 108 बार जप कर गोली खा लें। यह स्नायु दौर्बल्य को दूर करके स्मरण शक्ति को बढ़ाता हैं। तनाव, अवसाद आदि को दूर करके मस्तिष्क को स्मरण शक्ति प्रदान करता हैं।

16. ब्रह्मी, शखपुष्पी, मीठी बच, शतावर और गोरखमुंडी, इन सभी को समभाग लेकर महीन चूर्ण बना लें। इसमें से एक चम्मच चूर्ण (बच्चों को आधा चम्मच चूर्ण) को सुबह-सायं प्रतिदिनदूध या पानी के साथ लेते रहने से दिमागी थकान, सिरदर्द, तनाव, उतेजना, हिस्टीरिया, पागलपन, अनिद्रा, स्मृति दौर्बल्य आदि रोग दूर होते हैं तथा स्मरण शक्ति अक्षुण्ण रहती हैं।

योग परिचय

योग का स्वरूप:

हिरण्मये परे कोशं विराजं ब्रह्म निष्कलम् ।
तच्छु भ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद् यदात्मविदों विदु:।।

"मुण्डकोपनिषद्"

भावार्थ: सुनहरी परमकोष (हृदय कमल) में निर्मल निरवयव ब्रह्म ही शुभ्र हैं, ज्योतियों का ज्योति हैं, उसको वे जानते हैं, जो आत्मा (अपने-आप) को पहचानते हैं।

योग का अर्थ: योग शब्द संस्कृत के युज् धातु से बना हैं, जिसका शाब्दिक अर्थ होता हैं जोड़ना। आत्मा को परमात्मा से जोड़ने का नाम ही योग हैं।

महर्षि पतंजलि ने चित की वृत्तियों को रोकना ही योग बताया हैं- "योगश्चितवृत्ति निरोध:" (योगदर्शन1/2)।

भगवान श्रीकृष्ण ने कर्मो को करने की कौशलता को ही योग बताया हैं- "योग: कर्मसु कौशलम्" (गीता)।

महर्षि व्यास योग का अर्थ समाधी बताते हैं- "योग: समाधि" (व्यास भाष्य योग दर्शन1/1)।

योग वाशिष्ठ में संसार सागर से पार होने की युक्ति का नाम ही योग बताया गया हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि जीवन साधना करते हुए अपने अन्दर निहित शक्तियों को विकसित करके परम चैतन्य आत्मा का साक्षात्कार एवं पूर्ण आनन्द की प्राप्ति करना ही योग हैं। योग किसी जटिल और कृत्रिम अभ्यास का नाम नहीं हैं। योग जीवन जीने की उस कला का नाम हैं, जो स्वाभाविकतया प्रत्येक मनुष्य की होनी चाहिए। भगवान शिव योग के आदि प्रणेता हैं। आधुनिक काल में महर्षि पतंजलि द्वारा रचित "योग सूत्र" योग दर्शन का मूल ग्रन्थ माना जाता हैं।

योग के आठ अंग

महर्षि पतंजलि ने योग के आठ अंग बताये हैं- "यमनियमासन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाध: अष्टों-अंगानि"। (योग दर्शन 2/29)

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान और समाधि ये योग के आठ अंग हैं। इनमें से यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार तो बहिरंग हैं तथा धारणा, ध्यान और समाधि अंतरंग हैं।

यम :- यम शब्द का अर्थ हैं- 'यमु उपरमे' अर्थात असत्य, काम वासना आदि से अपने को दूर रखना। यम पांच होते हैं, जो इस प्रकार हैं-

"अहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रह:"। (योग दर्शन 2/30)

(1) **अहिंसा** - शब्दों से, विचारों से और कर्मों से किसी को अकारण कष्ट न देना अहिंसा हैं। स्वयं हिंसा न कर दूसरों द्वारा हिंसा किए जाने को मूक द्रष्टा बन देखते रहना भी हिंसा ही है। हिंसा का मूल 'अन्याय' है। अन्याय का उचित प्रतिरोध न करना हिंसा का समर्थन करना ही है। इसलिए यह आवश्यक है कि अहिंसा का व्रत लेने वाला व्यक्ति अन्याय के विरोध में आवाज़ भी उठायें।

(2) **सत्य** - विचारों में सत्यता, परम-सत्य में स्थित रहना, जैसा विचार मन में है वैसा ही प्रामाणिक बातें वाणी से बोलना सत्य कहलाता हैं।

(3) **अस्तेय** - अस्तेय का शाब्दिक अर्थ है चोरी न करना। मन, वचन और कर्म से चोरी न करना। किसी दूसरे की वस्तु पर बिना पूछे अधिकार न करना अस्तेय कहलाता हैं।

(4) **ब्रह्मचर्य** - दो अर्थ हैं:

चेतना को ब्रह्म के ज्ञान में स्थिर करना।
सभी इन्द्रिय-जनित सुखों में संयम रखना।

(5) **अपरिग्रह** - आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संचय नहीं करना अपरिग्रह कहलाता हैं।

नियम :-

योग के अंगों में नियम दूसरा अंग हैं। नियम भी पांच होते हैं। जो इस प्रकार है-

"शौच संतोष तप: स्वाध्यायेश्वर पराणिधान नियम:"। (योग दर्शन 2/32)

(1) **शौच** - शौच का अर्थ है पवित्रता। पवित्रता दो प्रकार की होती हैं- बाह्य तथा आंतरिक। जल से शरीर की शुद्धि तथा ज्ञान से बुद्धि की शुद्धि करनी चाहिए। जल आदि से शरीर की बाह्य शुद्धि होती है तथा राग, द्वेष, भय, काम, क्रोध, कायरता आदि आदि दुर्गुणों को त्यागना यह आंतरिक शुद्धि होती हैं।

(2) **संतोष** - अपनी योग्यता के अनुरूप अपनी शक्ति, सामर्थ्य, ज्ञान-विज्ञान तथा उपलब्ध साधनों द्वारा पूर्ण पुरूषार्थ करने से प्राप्त फल में प्रसन्न रहने को संतोष कहते हैं।

(3) **तप** - जीवन के लक्ष्य की पूर्ति में जो भी कष्ट, बाधाएं आएं, उनसे विचलित न होकर शान्ति व धैर्य से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने को तप कहते हैं।

(4) **स्वाध्याय** - भौतिक-विद्या व आध्यात्मिक-विद्या दोनों का अध्ययन करना स्वाध्याय कहलाता है। केवल भौतिक या केवल आध्यात्मिक विद्या से कोई भी अपने लक्ष्य को पूरा नहीं कर सकता है। अत: दोनों का समन्वय होना अति आवश्यक है।

(5) **ईश्वर-प्रणिधान** - अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए मन, वचन और कर्म से ईश्वर का गुणगान करना, ईश्वर के शरणागत हो जाना ईश्वर-प्रणिधान हैं।

आसन :- "स्थिर सुखमासनम्" । (योग दर्शन 2/46)

जिसमें स्थिर और सुखपूर्वक बैठा जा सकें वह आसन है। शारीरिक व मानसिक आरोग्य के लिए आसन बहुत उपयोगी हैं। कुछ उपयोगी आसनों का वर्णन इस पुस्तक में किया गया हैं।

प्रायाणाम :- "श्वास प्रश्वास योर्गति विच्छेद: प्राणायाम:" । (योग दर्शन 2/49)

श्वास-प्रश्वास की गति को रोककर सम कर देना या श्वास-प्रश्वास की गति पर यथाशक्ति नियन्त्रण प्राप्त करना प्राणायाम कहलाता हैं। प्राणायाम की सिद्धि हो जाने से मन में धारणाओं की योग्यता आ जाती हैं।

प्रत्याहार :- "ततः परमावश्यतेन्द्रियाणाम्" । (योग दर्शन 2/55)

प्रत्याहार के द्वारा इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार हो जाता हैं। इन्द्रियों का बाह्य विषयों से मुड़कर अन्तर्मुखी हो जाना प्रत्याहार हैं।

धारणा :- "देश बन्धश्चित्तस्य धारणा"। (योग दर्शन 3/1)

चित्त का किसी एक देश (स्थान जैसे नासिकाग्र भाग, नाभि, हृदयकमल, भृकुटी आदि) में एकाग्र करना धारणा कहलाती हैं।

ध्यान :- "तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्"। (योग दर्शन 3/2)

उस धारणा किये हुए स्थान, ध्येय रूप आत्मा या ईश्वर में वृत्ति का एक सा प्रवाह ध्यान हैं। ईश्वर का चिंतन करते हुए उसी में तल्लीन हो जाना ध्यान हैं।

समाधी :- "तदेवार्थमात्रनिर्भासम् स्वरूपशून्य समाधिः"। (योग दर्शन 3/3)

उस आत्म तत्व का अनुभव होना और अपना जीव स्वरुप शून्यवत् हो जाना अथवा ध्यान ही जब ध्येय (ईश्वर) के स्वरूप को प्रकाशित करने वाला अपने स्वरूप से शून्य जैसा हो जाता हैं, तब उसे समाधि कहते हैं।

निर्देश एवं सावधानियाँ

1. योगाभ्यास प्रातः काल शौचादि से निवृत करना चाहिए। स्नान करके योगाभ्यास किया जाये तो और भी अच्छा रहेगा क्योंकि स्नान करके शरीर हल्का होता है। वैसे शाम के समय भी जब पेट खाली हो तो ये आसन किये जा सकते हैं। योगाभ्यास के बाद स्नान करना हो तो 25-30 मिनट बाद कर सकते हैं।

2. योगाभ्यास करने का स्थान शांत व स्वच्छ होना चाहिये। किसी हवादार स्थान या बगीचे में आसन किया जाये तो बहुत अच्छा है। यदि घर पर अभ्यास करें तो कमरे की खिड़कियाँ खोल लें।

3. जिस स्थान पर आप योगाभ्यास करें वह समतल होना चाहिए।

4. दरी या चटाई बिछाकर योगाभ्यास करना चाहिए। ताकि भूमि की चुम्बकीय शक्ति आपका ध्यान तोड़े नहीं और नीचे से कोई भी चीज़ आपको गड़े नहीं।

5. मौसम के अनुसार वस्त्र पहने।

6. योगाभ्यास करते समय बातचीत बिलकुल भी न करें। अपने ध्यान को साँस (साँस लेना) और जिस अंग पर बल पड़ रहा हो, उस पर लगायें। जितना अधिक आप एकाग्र होकर योगाभ्यास करेंगे उतना ही

शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक लाभ आपको मिलेगा।

7. योगाभ्यास धीरे धीरे बढ़ायें। आसन की पूर्ण स्थिति तक जाने का प्रतिदिन अभ्यास करें।

8. योगाभ्यास करने वालों को यथासंभव प्रात: 4-5 बजे बिस्तर से उठने और रात्रि में 9-10 बजे तक सो जाने की आदत डालनी चाहिए।

9. सर्दियों में योगाभ्यास करने से पूर्व शरीर को हाथों से रगड़कर गर्म कर लेना चाहिए।

10. योगाभ्यास सदैव शान्त और प्रसन्नचित होकर करना चाहिए।

11. स्त्रियाँ गर्भावस्था में और मासिक धर्म के 4-5 दिनों में कठिन योगाभ्यास न करें। उन्हें हल्का व्यायाम व ध्यान करना चाहिए।

12. कठिन रोगों और ज्वर से पीड़ित व्यक्ति को आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

13. शरीर के किसी अंग की कभी हड्डी टूटी हो या बड़ा आप्रेशन हुआ हो, तो उन्हें उस अंग या हड्डी से सम्बन्धित आसन का अभ्यास नहीं करना चाहिए।

14. कमर के रोगी आगे की ओर झुकने वाले आसन तथा पेट के रोगी पीछे की ओर झुकने वाले आसन न करें।

15. योगासनों की समाप्ति के बाद कुछ समय (कम से कम 3 मिनट) के लिए शव आसन अवश्य करें। आसनों का लाभ आपको तभी मिल पायेगा, जब आप शव आसन करके अपने शरीर को थोड़ा विश्राम दें। यह अपने आप में एक पूर्ण आसन है।

16. योगाभ्यास और भोजन के पश्चात मूत्र त्याग अवश्य करना चाहिए। इससे शरीर के अन्दर एकत्र गंदगी मूत्र के द्वारा बाहर निकल जाती हैं।

17. योगासन करने के बाद कम से कम आधा घंटा बाद आहार लें। आसनों के पन्द्रह मिनट बाद एक गिलास पानी पी सकते हैं। ऑक्सीजन और हाइड्रोजन में विभाजित होकर संधि-स्थलों का मल निकलने में पानी बहुत लाभ-दायक होता हैं।

18. सभी प्रकार के योगाभ्यासों से पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता का यह श्लोक कंठस्थ करके व्यवहार में लायें -

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्या कर्मसु।
युक्त स्वप्नावबोधस्य योगौ भवति दु:ख।।

अर्थात :- जो बहुत अधिक खाता हैं अथवा बहुत कम खाता हैं, उसके लिए योग संभव नहीं हैं। जो बहुत अधिक सोता हैं अथवा बहुत कम सोता हैं, उसके लिए भी योग संभव नहीं हैं। जो आहार-विहार और निद्रा-जागरण की अपनी चेष्टाओं को संतुलित रखता हैं, उसके लिए ही यह योग दु:ख नाशक होता हैं अर्थात ऐसा जीवन जीने वाले को कष्ट नहीं उठाना पड़ता।

योगासन साधना

आसन योग का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। आसन की सिद्धि के लिए यम-नियमों का पालन करते हुए आसनों का अभ्यास करना चाहिए। आसनों के अभ्यास से शरीर के प्रत्येक अंग-प्रत्यंग की क्रियाशीलता बढती हैं और वे स्वस्थ, सक्रिय और लचीले बन जाते हैं।

शरीर और मन के बीच परस्पर समन्वय करना ही आसनों का मुख्य उद्देश्य हैं और इसका प्रारम्भ होता हैं शरीर से। शरीर को विशेष स्थिति में स्थिर रखना ही आसन का प्रारम्भिक स्वरुप हैं। धीरे-धीरे आसनों का मन पर भी प्रभाव पड़ने लगता हैं। तन और मन के बीच अच्छा समन्वय स्थापित हो जाता हैं और शरीर की चंचलता, अस्थिरता व आलस्य नष्ट होकर सात्विक प्रकाश व दिव्यता की प्राप्ति होती हैं।

पद्मासन

नाम :- इस आसन में शरीर की स्थिति पद्म (कमल) के फूल के समान हो जाती हैं। इसीलिए इसे पद्मासन कहते हैं।



विधि :- दाएं पैर को मोड़कर बाएं पैर की जंघा पर रखें। एड़ी को नाभि के बायी ओर लगायें। इसी प्रकार बाएं पैर को मोड़कर दाएं पैर की जंघा पर रखें। एड़ी को नाभि के दायी ओर लगायें। दोनों घुटने भूमि से लगे हुए हो। कमर व गर्दन सीधी रखें। दोनों हाथों को ज्ञान मुद्रा (तर्जनी अंगुली को अंगूठे के अग्रभाग पर लगायें, शेष तीनों अंगुलियाँ सीधी रखें) में घुटनों पर रखें अथवा ब्रहमांजलि (बायी हथेली के ऊपर दायी हथेली रखकर) बनाकर गोद में रख लें। आँखें धीरे से बंद कर लें। ध्यान को भ्रूमध्य में आज्ञा चक्र पर रखें।

लाभ :- 1. नाडी संस्थान पुष्ट होता हैं, स्नायु को शक्ति मिलती हैं।

2. मानसिक एकाग्रता बढती हैं, जिससे ध्यान लगाने में सहायता मिलती हैं।

3. सुषुम्नानाडी सीधी रहती हैं, जिससे प्राण का उत्थान होता हैं।

4. जठराग्नि को प्रदीप्त करता हैं। गठिया व सायटिका में लाभदायक हैं।

वज्रासन

नाम :- यह आसन वज्रनाडी को प्रभावित करके शरीर को वज्र (पत्थर) के समान कठोर बनाता हैं। इसीलिए इसे वज्रासन कहते हैं।

विधि :- दोनों पैरों को घुटनों से मोड़कर नितम्ब के नीचे इस प्रकार रखें कि एडियाँ बाहर की ओर निकली हुई हो तथा पंजे नितम्ब से लगे हुयें हो। घुटने मिलाकर रखें। पैरों के अंगूठे एक दूसरे से लगे हुयें हो। दोनों हथेलियाँ घुटनों पर रखें। कमर, गर्दन व सिर सीधा तथा शरीर ढीला रखें। श्वांस सामान्य रूप से चलने दें। ध्यान मणिपूरक चक्र पर रखें।



लाभ :- 1. यह एकमात्र ऐसा आसन हैं जो भोजन के उपरांत भी किया जा सकता हैं। भोजन के बाद इस आसन पर 5 से 15 मिनट तक बैठने से पाचनक्रिया तेज हो जाती हैं।

2. पिंडलियों पर जंघाओं का दबाव आने से पैरों की नशों में गर्मी उत्पन्न होती हैं, जिससे पेडू भाग के अंग सक्रिय होते हैं। पाचन क्रिया सुदृढ़ बनती हैं।

3. अपचन, गैस, अम्लपित तथा कब्ज की निर्वृत्ति होती हैं।

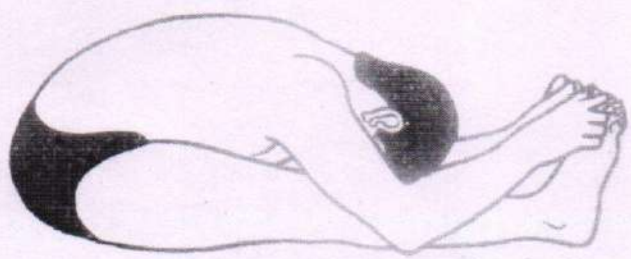
4. स्फित शिरा का रोग इससे ठीक होता हैं।

5. घुटने, जंघा तथा नितम्ब स्वस्थ बनते हैं।

6. जिन्हें ध्यान के आसनों को करने में कठिनाई आयें, तो वे इस आसन पर बैठकर ध्यान कर सकते हैं। यह मन की चंचलता को दूर करता हैं। दैनिक योगाभ्यास में इसे 3 से 5 मिनट तक करें।

पश्चिमोतानासन

नाम :- इस आसन में पश्चिम अर्थात पीठ के भाग में उतान अर्थात खिंचाव पड़ता हैं। इसलिए इसे पश्चिमोतानासन कहते हैं।



विधि :- आसन पर बैठकर दोनों पैरों को सामने सीधे फैला लें। एड़ी-पंजे परस्पर मिलाकर रखें। पैरों की अंगुलियाँ घुटनों की तरफ झुका कर रखें। कमर व गर्दन सीधी रखें। दोनों हाथों से दोनों पैरों के अंगूठों को पकड़ लें। श्वास बाहर निकलते हुए धीरे से सामने की ओर झुकते जायें और माथा घुटनों पर टिका दें। घुटने-पैर सीधे तथा भूमि से लगे हुए हो। कोहनियाँ भी घुटनों के पास भूमि पर टिका दें। इस स्थिति में यथाशक्ति 30 सेकण्ड से प्रारम्भ करके 5 मिनिट तक रहा जा सकता हैं। अंत में गहरा श्वास भरते हुए वापस सामान्य स्थिति में आ जायें। ध्यान मणिपूरक चक्र पर रखें।

लाभ :- 1. पृष्ट भाग की मांसपेशियां विस्तृत होकर शरीर को सुडौल बनाती हैं।

2. रीढ़ लचीली होकर कमर के निचले भाग का कड़ापन दूर होता हैं तथा स्वास्थ्य सुधरता हैं।

3. शारीरिक और मानसिक यौन विकार दूर होते हैं।

4. जठराग्नि प्रदीप्त होकर मन्दाग्नि, मलावरोध व अजीर्ण आदि रोग दूर होते हैं।

5. मूत्र रोग, मधु प्रमेह, रक्तविकार, अंडवृद्धि, पीलिया, नलों की सूजन, ज्ञान तंतुओं की कमजोरी आदि रोग दूर होते हैं।

6. वीर्य सम्बन्धी विकार, नपुंसकता, अनियमित मासिक, कष्ट दायक मासिक,बन्धयत्व तथा प्रदर रोग को दूर करता हैं।

7. कद वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण आसन हैं।

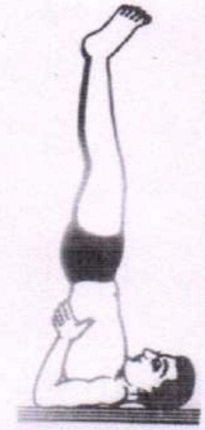
8. प्राण-अपान के मिलने से सुषुम्ना द्वार खुलने लगता हैं। जिससे कुण्डलिनी जागरण में सहायता मिलती हैं।

सावधानी :- उच्चरक्तचाप, हृदय रोग व कमर दर्द में पश्चिमोत्तानासन न करें।

सर्वांगासन

नाम :- इस आसन के करने से शरीर के सभी अंग सुचारू रूप से प्रभावित होते हैं। इसलिए इसे सर्वांगासन कहते हैं।

विधि :- पीठ के बल सीधे लेट जायें। दोनों पैर परस्पर मिले हुयें तथा दोनों हाथों को दोनों ओर बगल के साथ सटाकर रखें। हथेलियों का रुख भूमि की ओर हो। शरीर को ढीला छोड़ दीजियें।



श्वास अंदर भरते हुए पैरों को तानकर धीरे-धीरे ऊपर की ओर, पहले 30 डिग्री, फिर 60 डिग्री और अंत में 90 डिग्री तक उठाएं। अब पैरों को बिल्कुल सीधा रखते हुए सिर की ओर लाकर 120 डिग्री का कोण बनाएं। इसके बाद दोनों हाथों से कमर को सहारा देते हुए धड़ को भी ऊपर की ओर उठाएं। कोहनियाँ भूमि पर टिकी हुई हो। गर्दन व कन्धों के बल पूरा शरीर आकाश की ओर सीधा कर दें। पंजे आकाश की ओर तानकर रखें। ठोड़ी छाती के साथ लगा दें। दृष्टि दोनों पैरों के अंगूठों पर रखें अथवा आँखें बंद करके विशुद्धास्व चक्र में ध्यान करें। इस आसन को 1 मिनट से आरम्भ करें, धीरे-धीरे समय बढ़ाते हुए 20 मिनट तक कर सकते हैं।

वापस आते समय पैरों को सीधा रखते हुए पीछे की ओर थोड़ा झुकायें। हाथों को कमर से हटाकर हथेलियाँ पूर्व स्थिति में रखें। जिस क्रम से आप ऊपर उठे थे, उसी क्रम से धीरे-धीरे पहले धड़ को भूमि पर टिकायें और फिर पैरों को भूमि पर लाकर सीधे कर दें। जितने समय तक सर्वांगासन किया हो, लगभग उतने समय तक ही शरीर को शवासन में विश्राम प्रदान करें।

लाभ :- 1. मन्दाग्नि, लीवर, प्लीहा, यकृत दोष और थायराइड का अल्प विकास दूर होता हैं।

2. मनुष्य की अधोगामी शक्ति मस्तिष्क की ओर आकर ऊर्ध्वगामी बन जाती हैं, जिससे मेधाशक्ति बढती हैं और चिर यौवन की प्राप्ति होती हैं।

3. टांसिल आदि गले के विकार दूर होकर कंठ मधुर बनता हैं तथा बालों का झड़ना व पकना रुक जाता हैं।

4. थायराइड एवं पिच्यूटरी ग्रन्थि क्रियाशील होती हैं, जिससे कद वृद्धि में विशेष लाभ मिलता हैं। शीर्षासन करने से मिलने वाले लाभ इससे मिल जाते हैं।

5. दमा, श्वास, कफ, मधुमेह, हर्निया आदि रोगों में लाभदायक हैं।

6. ब्रह्मचर्य खण्डन, स्वप्नदोष, मानसिक विकार, स्मरण शक्ति की कमी, स्त्रियों में मासिक धर्म की अनियमितता एवं दर्द, मासिक न आना अथवा अधिक आना आदि रोग दूर हो जाते हैं।

7. थकान दूर होकर शरीर में स्फूर्ति आती हैं।

सावधानी :- थायराइड के अधिक विकास वाले, हृदय रोगी और आँख व कान के रोगी सर्वांगासन न करें।

ताड़ासन

नाम :- इस आसन में शरीर की आकृति ताड़वृक्ष के समान सीधी व लम्बी होती हैं। इसलिए इसे ताड़ासन कहते हैं।

विधि :- दोनों पैरों को परस्पर मिलाकर सीधे खड़े हो जायें। एडियाँ मिली हुई तथा पंजे खुले हुए हो। दोनों हाथों को श्वास भरते हुए ऊपर आकाश की ओर उठाइये। जैसे-जैसे हाथ ऊपर उठे, वैसे-वैसे ही पैरों की एडियाँ भी ऊपर उठाइये। शरीर का भार पंजों पर रहना चाहिए तथा शरीर ऊपर की ओर पूरी तरह से तना होना चाहिए। इस स्थिति में थोड़ी देर रुककर श्वास बाहर निकलते हुए खड़े होने की सामान्य स्थिति में वापस आकर विश्राम करें। इस आसन को 1 से 7 बार तक यथाशक्ति कर सकते हैं।



लाभ :- 1. ताड़ासन कद वृद्धि के लिए सर्वोत्तम हैं। इससे शरीर में स्फूर्ति आती हैं।

2. पुरुषों के वीर्यस्राव तथा स्त्रियों के प्रदर रोगों में लाभ होता हैं।

3. सम्पूर्ण शरीर के स्नायु सक्रिय एवं विकसित होते हैं।

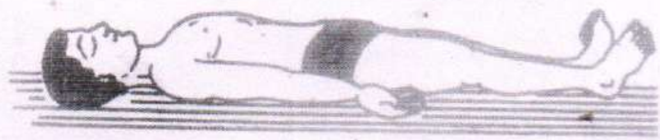
4. फेफड़ों एवं हृदय को शक्ति मिलती हैं, छाती चौड़ी होती हैं, कंधे पुष्ट होते हैं।

5. पाचन क्रिया, श्वसन क्रिया, रक्त संचरण, नाड़ी संस्थान तथा ग्रंथि प्रणाली उचित ढंग से कार्य करने लगती हैं।

शवासन

नाम :- शव का अर्थ हैं मृत। इस आसन में शरीर के अंग-अंग को ढीला छोडकर शरीर एवं मस्तिष्क को पूर्णत विश्राम की स्थिति में शिथिल किया जाता हैं। इस आसन में शरीर की स्थिति शव के समान हो जाती हैं। इसलिए इसे शवासन कहते हैं।

विधि :- आसन पर पीठ के बल चित्त लेट जाइयें। दोनों पैरों को सीधा फैलाइये। पैरों में लगभग एक फिट का फासला रखें। हाथों को शरीर से 6 इंच हटाकर रखें। हथेलियों का रुख आकाश की ओर रखें। आँखों को धीरे



से कोमलता के साथ बंद कर लें। गर्दन सीधी रखें। सम्पूर्ण शरीर को ढीला छोड़ दें। मन में भावना लायें कि मेरा पूरा शरीर शांत हैं। फिर पैरों के अंगूठों से प्रारम्भ करके सिर की चोटी तक की समस्त मांस पेशियों और स्नायुओं को शिथिल रहने का मन ही मन आदेश दें, जिससे शरीर शवासन की स्थिति में आ जायें। श्वास स्वाभाविक गति से चलने दें।

लाभ :- 1. मानसिक तनाव, उच्चरक्तचाप एवं अनिद्रा के लिए सर्वोत्तम हैं। इससे शरीर की सारी थकान दूर हो जाती हैं।

2. स्नायु दौर्बल्य एवं नकारात्मक चिंतन को दूर करता हैं।

3. स्मरण शक्ति की कमी, मानसिक असंतुलन आदि रोगों को दूर करता हैं।

4. शरीर, मन एवं आत्मा को पूर्ण विश्राम, ताजगी, स्फूर्ति, शक्ति व आनन्द देता हैं।

सूर्य नमस्कार

सूर्य नमस्कार एक ऐसी सम्पूर्ण वैज्ञानिक व्यायाम प्रणाली हैं जिसके करने से सम्पूर्ण शरीर को आरोग्य, शक्ति एवं ऊर्जा की प्राप्ति होती हैं। सूर्य नमस्कार से शरीर के सम्पूर्ण अंग-प्रत्यंगों में क्रियाशीलता आती हैं। शरीर की समस्त आंतरिक ग्रन्थियों के अन्तःस्राव (हार्मोन्स) की प्रक्रिया का नियमन होता हैं।

पुरूषों के लिए तो सूर्य नमस्कार उपयोगी है ही, किन्तु स्त्रियों के लिए तो यह वरदान के समान हैं। सूर्य नमस्कार के नियमित अभ्यास से शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति के साथ विचार शक्ति और स्मरण शक्ति तेज होती हैं। यदि संभव हो तो सूर्य नमस्कार सूर्योदय के समय करें। मन्त्रों के साथ सूर्य नमस्कार करने से अधिक लाभ मिलता हैं। प्रत्येक स्थिति में एक-एक मंत्र का मानसिक जप किया जाता हैं। सूर्य नमस्कार के बारह मंत्र इस प्रकार हैं :-

1.	ॐ मित्राय नमः	2.	ॐ रवये नमः
3.	ॐ सूर्याय नमः	4.	ॐ भानवे नमः
5.	ॐ खगाय नमः	6.	ॐ पूष्णे नमः
7.	ॐ हिरण्यगर्भाय नमः	8.	ॐ मरीचये नमः
9.	ॐ आदित्याय नमः	10.	ॐ सवित्रे नमः
11.	ॐ अर्काय नमः	12.	ॐ भास्कराय नमः



सूर्य नमस्कार बारह स्थितियों में पूर्ण होता हैं।

प्रथम स्थिति :- दोनों पैरों को परस्पर मिलाकर सीधे खड़े हो जायें। एड़ी पंजे मिले हुए हो। दोनों हाथ नमस्कार की मुद्रा में जोड़ें तथा अंगूठे छाती के मध्य लगे हुए हो। दृष्टि सामने रखें।इस स्थिति के आरम्भ में ॐ मित्राय नमः कहें।

द्वितीय स्थिति :- श्वास अन्दर भरते हुए दोनों हाथों को खोलकर सामने से कानों से सटाते हुए पीछे की ओर ले जायें। कमर को भी यथाशक्ति पीछे की ओर झुकायें। दृष्टि आकाश की ओर रखें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ रवये नमः कहें।

तृतीय स्थिति :- श्वास बाहर निकालते हुए, दोनों हाथों को कानों से सटाते हुए नीचे की ओर झुके, घुटने सीधे रखें। दोनों हथेलियाँ पैरों के दाएं-बाएं भूमि पर टिका दे तथा माथा घुटने से लगायें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ सूर्याय नमः कहें।

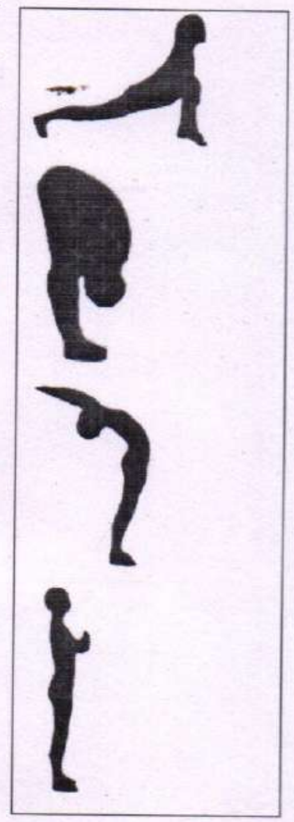
चतुर्थ स्थिति :- दोनों हथेलियाँ भूमि पर ही टिकाए रखें। बाएं पैर को श्वास भरते हुए पीछे की ओर ले जायें। छाती आगे की ओर निकली हुई तथा दायाँ घुटना छाती के सामने रखें। गर्दन पीछे की ओर झुकी हुई। दृष्टि आकाश की ओर रखें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ भानवे नमः कहें।

पंचम स्थिति :- श्वास बाहर निकालते हुए दाहिने पैर को भी पीछे ले जायें। एडिया मिलाकर भूमि से लगा दें। नितम्ब व कमर ऊपर उठाकर तथा सिर को झुका कर नाभि को देखें। थोड़ी छाती से लगाकर रखें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ खगाय नमः कहें।

षष्ठम स्थिति :- श्वास अन्दर भरते हुए हाथों तथा पैरों के पंजों को स्थिर रखते हुए शरीर को पृथ्वी के समान्तर लायें। धीरे-धीरे छाती, घुटने तथा माथा भूमि पर टिका दें। पेट हल्का सा ऊपर उठाकर रखें। फिर श्वास को बाहर निकल दें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ पूष्णे नमः कहें।

सप्तम स्थिति :- श्वास अन्दर भरते हुए हाथों को सीधा कर लें, कोहनियाँ तनी हुई हो। शरीर को कमर से ऊपर उठाते हुए छाती को आगे की ओर निकालें। गर्दन को पीछे की ओर झुका दें। दृष्टि आकाश की ओर रखें। कुल्हे, घुटने तथा पंजे भूमि पर टिके हुए हो। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ हिरण्यगर्भाय नमः कहें।

अष्टम स्थिति :- दोनों हथेलियाँ भूमि पर टिकाए रखें। श्वास बाहर निकालते हुए पंजे सीधे करें। शरीर का उपरी भाग आगे की ओर झुकाते हुए निचला भाग भूमि से ऊपर उठाएं। दोनों हाथ-पैर सीधे तने हुए तथा एडियाँ भूमि पर टिकी हुई हो। एडियाँ, कमर और कलाइयों से शरीर त्रिकोण की स्थिति में दिखाई दें। ठोड़ी छाती से लगाकर रखें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ मरीचये नमः कहें।



नवम स्थिति :- श्वास अन्दर भरते हुए बाएं पैर को घुटनों से मोड़कर आगे की ओर लायें। बाएं पैर का पंजा दोनों हथेलियों के बीच पूर्व स्थान पर रखें। दाहिने पैर का पंजा और घुटना सीधा रखें। दृष्टि आकाश की ओर रखें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ आदित्याय नमः कहें।

दशम स्थिति :- श्वास बाहर निकालते हुए दायाँ पैर भी आगे ले आयें। दाएं पैर का पंजा दोनों हथेलियों के बीच पूर्व स्थान पर रखें। दोनों हथेलियाँ दोनों पैरों के पास भूमि पर टिकी हो। दोनों हाथ-पैर सीधे रखें। शरीर को कमर से नीचे की ओर झुकाते हुए माथे को घुटने से लगायें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ सवित्रे नमः कहें।

एकादशी स्थिति :- श्वास अन्दर भरते हुए दोनों हाथों को सामने से कानों से सटाते हुए पीछे की ओर ले जायें। कमर को भी यथाशक्ति पीछे की ओर झुकायें। दृष्टि आकाश की ओर रखें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ अर्काय नमः कहें।

द्वादशी स्थिति :- श्वास बाहर निकालते हुए सावधान की स्थिति में खड़े हो जायें। एड़ी पंजे मिले हुए हो। दोनों हाथ नमस्कार की मुद्रा में जोड़ें तथा अंगूठे छाती से लगाकर रखें। दृष्टि सामने रखें। सूर्य को नमस्कार करें। इस स्थिति के आरम्भ में ॐ भास्कराय नमः कहें।

यह सूर्य नमस्कार की एक आवृत्ति हैं। सूर्य नमस्कार की एक से लेकर इक्कीस बार तक यथाशक्ति आवृत्ति कर सकते हैं।

लाभ :- 1. सूर्य नमस्कार सर्वश्रेष्ठ व पूर्ण वैज्ञानिक व्यायाम हैं, इससे शरीर के सभी अंग बलिष्ठ व निरोग रहते हैं।

2. मेरुदंड व रीढ़ में लचक उत्पन्न करता हैं।

3. मानसिक शांति, एकाग्रता, बल, ओज एवं तेज की वृद्धि करता हैं।

4. रक्त संचार को सुचारू करके रक्त की अशुद्धि से उत्पन्न विकारों को दूर कर देता हैं।

5. मस्तिष्क, अग्नाशय, आमाश्य, आंत्र, फेफड़े, स्नायुमंडल एवं हृदय को शक्ति देता हैं।

6. उदर रोग, बवासीर, मधुमेह एवं श्वास सम्बन्धी रोगों को दूर करता हैं।

7. सूर्य नमस्कार से सम्पूर्ण शरीर को पूर्ण आरोग्य, शक्ति एवं ऊर्जा की प्राप्ति होती हैं।

सूर्य नमस्कार के सम्पूर्ण लाभ प्राप्त करने के लिए सूर्य नमस्कार के पश्चात ताड़ासन तथा कम से कम 2 मिनट का शवासन अवश्य करना चाहिए।

सावधानी :- रजस्वला, हर्निया, उच्च रक्तचाप, फेफड़े व हृदय दुर्बलता, कमर दर्द और ज्वर (बुखार) की स्थिति में सूर्य नमस्कार न करें।

प्राणायाम साधना

प्राणायाम यौवन रक्षा का एक महत्वपूर्ण साधन हैं। प्राण सर्वाधिक शक्तिशाली एवं उपयोगी जीवनीय तत्व हैं। प्राण की शक्ति ही हमारी जीवनी शक्ति हैं। यही हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता का आधार हैं। प्राणायाम करने से इन्द्रियों और मन के दोष दूर होकर अन्तश्चेतना का विकास होता हैं। शरीर में संव्याप्त प्राण का संयोग ब्रह्माण्ड व्यापी महाप्राण से होता हैं। इस संयोग से शरीर में स्थित प्राण का नवीनीकरण हो जाता हैं। प्राण चेतन ऊर्जा हैं, उसे धारण करने की क्षमता का विकास प्राणायाम से होता हैं। प्राणायाम की प्रक्रिया से मानवीय व्यक्तित्व व चरित्र की दुर्बलताओं को समाप्त करके नई विशेषताओं को जन्म दिया जा सकता हैं।

आइंस्टीन अपने स्कूली शिक्षा काल में औसत श्रेणी से भी निम्न श्रेणी के विद्यार्थी थे। बाद में वे महान भौतिकविद वैज्ञानिक बने। उन्होंने गणितीय विधि से सिद्ध किया कि प्रकाश की गति ही ब्रह्माण्ड में एकमात्र स्थाई इकाई (Consten Factor) हैं। आर. नारायण ने जब उनसे उनकी सफलता का रहस्य पूछा तो आइंस्टीन ने उन्हें अपना ध्यान-कक्ष दिखाया, जिसमें में महर्षि पतंजलि प्रणीत योग-ध्यान प्रणाली के अनुसार साधना करते थे। उन्होंने एवं ब्रह्मचर्य के महत्व को जाना, समझा तथा अपने जीवन में अपनाया।

प्राणायाम का सम्बन्ध मनुष्य के स्वास्थ्य और आरोग्य से भी हैं। सूक्ष्म शरीर के साथ-साथ स्थूल शरीर पर भी प्राणायाम का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से होता हैं। इससे फेफड़े सबल बनते हैं तथा रक्त संचार की प्रणाली सुधरती हैं। हमारे शरीर में पांच प्राण और पांच उपप्राण होते हैं। इनके बीच असंतुलन होने पर शारीरिक और मानसिक रोगों की उत्पत्ति होती हैं। प्राणायाम करने से इनके बीच संतुलन बना रहता हैं तथा स्वास्थ्य की रक्षा होती हैं।

महान वैज्ञानिक आइंस्टीन की मृत्यु के बाद जब उनके मस्तिष्क का शोध किया गया तो पाया गया कि उनका मस्तिष्क भी साधारण मनुष्य की तरह था, लेकिन उनके मस्तिष्क का रक्त संचार एवं ऑक्सीजन का प्रवाह अति उत्तम था। मस्तिष्क के रक्त संचार एवं ऑक्सीजन के प्रवाह को ठीक बनाएं रखने के लिए ध्यान और प्राणायाम को जीवनचर्या में नियमित स्थान देना बहुत आवश्यक हैं।

प्राणायाम से आरोग्य, बल, तेज तथा आयु की वृद्धि होती हैं। यौवन की रक्षा एवं मानसिक शक्तियों का विकास होता हैं। प्राणायाम द्वारा काम-वासना को परमात्म ऊर्जा में रूपान्तरित करने में बहुत सहायता मिलती हैं। ब्रह्मचारी को अपने ब्रह्मचर्य की, यौवन की रक्षा हेतु प्रतिदिन नियमित रूप से प्राणायाम का अभ्यास करना चाहियें।

प्राणायाम के लिए आवश्यक निर्देश

प्राणायाम के अभ्यस के लिए किसी ध्यानात्मक आसन में बैठना अधिक उपयुक्त होता हैं, जैसे- पद्मासन, सिद्धासन, सुखासन, वज्रासन आदि। प्राणायाम करते समय रीढ़ की हड्डी को सदा सीधा रखें तथा शरीर में किसी भी प्रकार का तनाव न लाकर मन को शांत एवं प्रसन्न रहना चाहिए। प्राणायाम करते समय थकान का अनुभव हो तो दूसरा प्राणायाम करने से पूर्व 8-10 सामान्य दीर्घ श्वास लेकर थोड़ी देर (1 से 2 मिनट) विश्राम करें। प्राणायाम का अभ्यास धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए।

प्राणायाम करने के लिए श्वास अन्दर लेना 'पूरक' कहलाता हैं। श्वास को अन्दर रोककर रखना 'अन्त: कुम्भक', श्वास को बाहर निकलना 'रेचक' और श्वास को बाहर ही रोककर रखना 'बाह्य कुम्भक' कहलाता हैं। प्राणायाम को किसी अनुभवी योग प्रशिक्षक से विधि पूर्वक सीखकर करना अधिक उत्तम होता हैं। प्राणायाम का अभ्यास करते समय जबरजस्ती न करें, धीरे-धीरे धैर्यपूर्वक अपनी सामर्थ्य के अनुसार करें। प्राणायाम करने से पूर्व निर्देश एवं सावधानियाँ वाला अध्याय ध्यान पूर्वक पढ़ लें।

अनुलोम-विलोम प्राणायाम

नाम :- इस प्राणायाम के करने में एक नासिका स्वर से श्वास लेकर दुसरे नासिका स्वर से छोड़ा जाता हैं। फिर दूसरे नासिका स्वर से श्वास लेकर पहले नासिका स्वर से छोड़ा जाता हैं। इसलिए इसे अनुलोम-विलोम प्राणायाम कहते हैं।



विधि :- किसी ध्यानात्मक आसन में सुविधानुसार सीधे बैठ जायें। दोनों हाथ घुटनों पर ज्ञान मुद्रा (तर्जनी अंगुली को अंगूठे के अग्रभाग पर लगायें, शेष तीनों अंगुलियाँ सीधी रखें।) में रखें। अब चार-पांच लम्बे गहरे श्वास लेकर पूरी तरह बाहर निकाल दें। इसके बाद दाएं हाथ को बाएं कंधे की सीध में उठाकर कोहनी से मोड़ लें। दाएं हाथ के अंगूठे द्वारा दायाँ नासिका स्वर बंद करके बाएं नासिका स्वर से धीरे-धीरे लम्बा गहरा श्वास लें। अब अनामिका व मध्यमा अंगूलियों के द्वारा बायाँ नासिका स्वर बंद कर लें और दाएं नासिका स्वर से अंगूठा हटाकर श्वास धीरे-धीरे बाहर निकाल दें। फिर दाएं नासिका स्वर से ही धीरे-धीरे श्वास अन्दर भरें और बाएं नासिका स्वर से बाहर निकालें। यह एक आवृति पूरी हुई।

इस प्रकार इस क्रिया को लगातार करते रहना अर्थात बाएं नासिका स्वर से श्वास लेकर दाएं नासिका स्वर से बाहर निकाल देना, फिर दाएं नासिका स्वर से श्वास लेकर बाएं नासिका से श्वास बाहर निकाल देना। आरम्भ में इसका अभ्यास 1 मिनट तक करें, फिर धीरे-धीरे समय बढ़ाते हुए इस प्राणायाम का अभ्यास 5 मिनट तक करें। इस प्राणायाम का अधिकतम समय 10 मिनट हैं, इससे अधिक न करें।

लाभ :- 1. श्वास-प्रश्वास की गति लयबद्ध व गहरी होती हैं, जिससे शरीर व मन निरोगी रहता हैं।

2. नासिका और फेफड़ों के मल की निवृत्ति होती हैं। हृदय की शिराओं के अवरोध (ब्लोकेज) खुल जाते हैं। कोलेस्ट्रोल की अनियमितता दूर हो जाती हैं।

3. रक्त शुद्ध होता हैं। त्वचा कान्तिमय व चेहरा तेजस्वी हो जाता हैं।

4. मन एकाग्र होता हैं, मनोबल में वृद्धि होती हैं। इन्द्रिय संयम में सहायता मिलती हैं।

5. शरीर के विजातीय एवं विषैले तत्व निकालकर शरीर को पूर्ण स्वस्थ कान्तिमय व बलिष्ठ बनाता हैं।

6. नजला, जुकाम, साइनस, स्नायु दौर्बल्य, दमा, खांसी, टांसिल, क्षीण नेत्र ज्योति, धातु रोग, मूत्र रोग, वात-कफ-पित्त के रोग दूर होते हैं। त्रिदोषों का शमन होता हैं।

7. नाड़ियों की शुद्धि होकर कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होती हैं।

भस्त्रिका प्राणायाम

नाम :- भस्त्रिका का अर्थ हैं धौकनी। इस प्राणायाम के करने में लोहार की धौकनी की तरह से जल्दी-जल्दी श्वास की रेचक-पूरक क्रिया होती हैं। इसलिए इसे भस्त्रिका प्राणायाम कहते हैं।

विधि :- किसी ध्यानात्मक आसन में सीधे बैठकर शरीर व मन को स्थिर करें। दोनों नासिका स्वरों से श्वास को छाती में पूरा अन्दर भरें व बाहर भी शक्ति के साथ छोड़े। इस प्राणायाम में श्वास अन्दर भरते समय पेट को नहीं फूलना चाहिए। श्वास को डायाफार्म तक भरें, इससे पेट नहीं फूलेगा, पसलियों तक छाती ही फूलेगी।

जिनके दोनों नासिका छिद्र कफ की अधिकता या साइनस आदि रोगों के कारण ठीक से खुले हुए नहीं होते, उन लोगों को पहले दाएं नासिका स्वर को बंद करके बाएं नासिका स्वर से 20 बार रेचक व पूरक करना चाहिए। फिर बाएं नासिका स्वर को बंद करके दाएं नासिका स्वर से 20 बार रेचक व पूरक करना चाहिए। फिर अन्त में दोनों नासिका स्वरों इडा व पिंगला से रेचक व पूरक करते हुए भस्त्रिका प्राणायाम करना चाहिए।

इस प्राणायाम को अपनी सामर्थ्य के अनुसार 3 से 5 मिनट तक करना चाहिए। जिनके फेफड़े व ह्रदय कमजोर हो उनको मन्दगति से रेचक व पूरक करते हुए यह प्राणायाम करना चाहिए। स्वस्थ व्यक्ति को धीरे-धीरे श्वास-प्रश्वास की गति को बढाते हुए मध्यम और फिर तीव्र गति से भस्त्रिका प्राणायाम करना चाहिए।

लाभ :- 1. सर्दी-जुकाम, दमा, श्वास रोग, एलर्जी, पुराना नजला आदि कफ रोग दूर होते हैं।

2. फेफड़े सबल बनते हैं, त्रिदोष सम होते हैं तथा जठराग्नि बढती हैं।

3. अधिक मात्रा में शुद्ध प्राणवायु मिलने से रक्त परिशुद्ध होता हैं तथा शरीर के विषाक्त, विजातीय तत्वों का निष्कासन होता हैं।

4. थायराइड व टांसिल आदि गले के रोग दूर होते हैं।

5.प्राणोत्थान व कुण्डलिनी जागरण में सहायक हैं।

ऊर्जायी प्राणायाम

नाम :- इस प्राणायाम को करने से ऊर्जा की प्राप्ति होती हैं। इसलिए इसे ऊर्जायी प्राणायाम कहते हैं।

विधि :- किसी ध्यानात्मक आसन में सीधे बैठ जायें। दोनों हाथ ज्ञान मुद्रा में घुटनों पर रखें। मूलबन्ध लगाकर (गुदामार्ग व मूत्रेन्द्रिय को ऊपर की ओर खींचकर) जल्दी-जल्दी 8-10 लम्बे गहरे श्वास लेकर, श्वास को पूरी तरह बाहर निकाल दें। अब दोनों नासिका स्वरों को खुला रखकर जितना संभव हो सके उतना गहरा श्वास लेकर छाती व फेफड़ों की पसलियों तक के भाग को श्वास से भर दें। इसके बाद यथाशक्ति 30 सेकण्ड या 1 मिनट का अन्त:कुम्भक करें। फिर दायाँ नासिका स्वर बंद करके बाएं नासिका स्वर से श्वास धीरे-धीरे बाहर निकाले।

यह ऊर्जायी प्राणायाम की एक आवृत्ति हुई, ऐसी 8-10 आवृतियाँ करनी चाहिए। इस प्राणायाम को दोनों

नासिका स्वरों से श्वास छोडकर भी किया जा सकता हैं।

लाभ :- 1. आरोग्य की प्राप्ति होती हैं तथा दीर्घ जीवन होता हैं।

2. वीर्य विकार, स्वप्नदोष, प्रदर रोग जैसे धातु सम्बन्धी रोग दूर हो जाते हैं।

भ्रामरी प्राणायाम

नाम :- इस प्राणायाम में रेचक करते समय भ्रमर (भौरे) के गुंजन के समान ध्वनी निकलती हैं। इसलिए इसे भ्रामरी प्राणायाम कहते हैं।



विधि :- किसी ध्यानात्मक आसन में कमर व गर्दन सीधी रखकर बैठे। दोनों हाथों की कोहनियों को कन्धों की सीध तक उठाये। दोनों हाथों के अंगूठे कान में लगा लें। ऊपर की पहली तर्जनी अंगुलियाँ माथे पर रखें। मध्यमा अँगुलियों को नासिका के मूल में आँख के पास लगा लें। नासिका को दोनों ओर से हल्का सा दबाएँ। अब नासिका के द्वारा लम्बा गहरा श्वास अन्दर भरें। कुछ क्षण अन्त:कुम्भक करें। होठ बंद रखकर अनहद नाद के रूप में ओम् (ॐ) का उच्चारण करते हुए भ्रमर की तरह से गुंजन करते हुए श्वास को बाहर निकाले।

यह भ्रामरी प्राणायाम की एक आवृति हुई। प्रारम्भ में इसकी तीन आवर्तियाँ करें। धीरे-धीरे इसका अभ्यास बढ़ाते हुए इसकी अधिक से अधिक 20 आवर्तियाँ भी की जा सकती हैं। तर्जनी अँगुलियों से कान बंद करके भी यह प्राणायाम किया जा सकता हैं।

इस प्राणायाम में गुंजन लयबद्ध होना चाहिए तथा ध्यान गुंजन की ध्वनी पर होना चाहिए। इस प्राणायाम को करने के बाद भ्रूमध्य-आज्ञाचक्र में दिव्य ज्योति का ध्यान करें। विचार करें कि मेरा समस्त अज्ञान दूर होकर मेरी बुद्धि ऋतम्भरा प्रज्ञा बन रहीं हैं।

लाभ :- 1. मस्तिष्क के सभी अवयव भ्रमर जैसे गुंजन के स्पंदन से प्रभावित होते हैं। मन की चंचलता, मानसिक तनाव, उत्तेजना, अनिंद्रा, मिर्गी, उच्च रक्तचाप आदि रोग दूर होते हैं।

2. इसके करना से एसीटाईलकोलीन, डोयामीन और प्रोटीन के बीच होने वाली रासायनिक क्रिया को बल मिलता हैं।

3. इसके करने से आश्चर्यजनक स्मरण शक्ति का विकास होता हैं। मस्तिष्क के सभी रोग निर्मूल हो जाते हैं। स्नायु मण्डल को शक्ति प्रदान करता हैं।

4. रक्त एवं मज्जा तंतु शुद्ध होते हैं। ह्रदय रोग में लाभ मिलता हैं।

5. काम शक्ति ऊर्ध्वगामी हो जाती हैं तथा प्राण दीर्घ एवं सूक्ष्म होने से ध्यान स्वत: होने लगता हैं ।

ध्यान साधना

ध्यान ब्रह्मचर्य का, यौवन रक्षा का सर्वाधिक प्रबलतम साधन हैं। ध्यान चित्त की स्थिरता का ही दूसरा नाम हैं। यदि हमें कामुकता से मुक्त होना हैं, काम से ऊपर उठाना हैं, तो काम ऊर्जा के रूपांतरण के लिए एक

नया द्वार खोलना होगा- ध्यान का द्वार। काम के रूपान्तरण की सही दिशा हैं- ध्यान।

ध्यान जितना परिपक्व होता हैं, चित की स्थिरता जितनी बढती हैं, उतनी ही काम की सम्भावना जीवन में कम होती चली जाती हैं। ऊर्जा एक नए द्वार से ऊर्ध्वगामी होकर बहने लगती हैं। काम की ऊर्जा ही अंततः राम में रूपान्तरित होती हैं।

ध्यान की उच्च अवस्था अर्थात समाधि के स्तर पर तो ब्रह्मचर्य के लिए किसी अन्य साधन की आवश्यकता ही नहीं रहती, स्वत: ही जीवन में ब्रह्मचर्य फलित होता हैं। ध्यान से मनुष्य को समयहीन, अहंकारशून्य अनुभव होता हैं, ध्यान से आत्मसाक्षात्कार होता हैं।

ध्यान के आवश्यक निर्देश

1. ध्यान का अभ्यास पद्मासन, वज्रासन, सुखासन आदि किसी भी सुविधाजनक आसन में बैठकर कर सकते हैं। ध्यान करते समय कमर व गर्दन सीधी रखें, परन्तु शरीर अकड़ा हुआ न हो।

2. चेहरे पर कोई पेशीय तनाव न हो, चेहरे पर प्रसन्नता का भाव रखें। आँखों को कोमलता के साथ बन्द करें। दोनों हाथ घुटनों पर ज्ञान मुद्रा में अथवा ब्रहमांजलि बनाकर गोदी में रखें।

3. ध्यान करते समय केवल ध्यान करें। ध्यान करते समय किसी अन्य विचार को महत्व न दें।

4. ध्यान करते समय शीघ्रता न करें। ध्यान में जितनी भी देर बैठें उतनी ही देर निश्चित होकर बैठें।

5. ध्यान के तुरंत बाद एकदम से आँखें नहीं खोलनी चाहिए। शान्तभाव को बराबर बनाएं रखकर धीरे-धीरे पलके झपकाते हुए आँखें खोलनी चाहियें।

ओम् ध्यान

ॐ अनहद नाद हैं, परम संगीत हैं, सृष्टि के सभी स्वर इसमें पिरोए गये हैं। इसी से उनका जन्म हुआ हैं, इसी से उनको जीवन मिलता हैं और इसी में उन्हें लय होना हैं। ॐ सृष्टि की सभी ऊर्जाओं का स्रोत हैं। ॐ ध्यान बीज हैं, इसके ध्यान से सृष्टि के सभी रहस्य उजागर हो जाते हैं। ॐ के नाद का, ध्वनी का महत्व केवल पवित्र सनातन वैदिक हिन्दू धर्म में ही नहीं, अपितु जैन, बौद्ध, सिक्ख आदि पंथों में भी हैं। म्लेक्ष ईसाइयों का 'आमेन' और पिशाच मुसलमानों का 'आमीन' भी ॐ का ही बिगड़ा हुआ रूप हैं।

ॐ शब्द तीन अक्षरों से मिलकर बना हैं- अ+ऊ+म =ओम्। पहला शब्द 'अ' नाभि में स्पन्दन करता हैं, दूसरा शब्द 'ऊ' हृदय में स्पन्दन करता हैं और तीसरा शब्द 'म' दोनों भोहों के मध्य आज्ञाचक्र में स्पन्दन करता हैं। ओम् ध्वनी के उच्चारण करने से समस्त ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ और मन एकाग्र व अन्तर्मुखी हो जाता हैं तथा प्रसुप्त शक्तियाँ जागृत होती हैं। ॐ का नाद समाधि के दिव्य नाद को भी प्राप्त करा सकता हैं।

विधि :- पद्मासन या ध्यान के किसी अन्य सुविधाजनक आसन में बैठ जायें। कमर व गर्दन सीधी, शरीर ढीला, आँखें कौमलता से बन्द, चेहरे पर प्रसन्नता, दोनों हाथ घुटनों पर ज्ञान मुद्रा में अथवा ब्रहमांजलि बनाकर गोदी में रख लें।

धीरे-धीरे दोनों नासिका स्वरों से 4-5 लम्बें और गहरे श्वास लेकर बाहर छोड़ दें। अब लम्बा गहरा श्वास लेकर ॐ ध्वनि का लयबद्ध उच्चारण करें। मन लय पर एकाग्र हो तथा एक ध्वनि और दूसरी ध्वनि के बीच प्रतिध्वनि पर ध्यान हो। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहें जब तक कि मन पूर्णत: इस पर स्थिर न हो जायें। मन के स्थिर होने पर मौन हो जायें तथा श्वास-प्रश्वास पर अपने मन को एकाग्र करें। श्वास-प्रश्वास की क्रिया को साक्षी भाव से, द्रष्टा भाव से देखते जायें। अन्दर आती हुई श्वास के साथ 'ओ' का तथा बाहर जाती हुई श्वास के साथ 'म' का मानसिक जप करें। कुछ समय तक श्वास-प्रश्वास के साथ साक्षी (द्रष्टा) भाव से ॐ का जप करने से ध्यान स्वत: होने लगता हैं। मन अत्यन्त एकाग्र व निर्मल होकर ॐ में तन्मय व तद् रूप हो जाता हैं। जिससे आत्मसाक्षात्कार और आनंद का अनुभव होता हैं। ॐ के साथ-साथ सोहम् का जप व ध्यान भी किया जा सकता हैं।

प्रतिदिन इस ध्यान का कम से कम 5 से 25 मिनट अभ्यास करने से तनाव, अवसाद, स्मरण शक्ति की कमी, अनिद्रा आदि रोग दूर होते हैं तथा स्वास्थ्य की प्राप्ति होती हैं। रात्रि में यह ध्यान करके सोने से निद्रा भी योगमयी हो जाती हैं, दु:स्वप्न से मुक्ति मिलती हैं तथा प्रगाढ़ निद्रा आती हैं।

साक्षी ध्यान

इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करने के लिए इच्छाओं पर नियन्त्रण पाना अति आवश्यक हैं। साक्षी ध्यान के अभ्यास से इच्छाओं पर नियन्त्रण प्राप्त होकर चित की एकाग्रता बढती हैं तथा मन निर्मल हो जाता हैं, जिससे आत्मा का प्रकाश प्राप्त होने लगता हैं।

विधि :- किसी सुविधाजनक ध्यान की स्थिति में बैठकर मन में जो भी, जैसे भी अच्छे-बुरे विचार आ रहे हो, उनकों साक्षी भाव से देखते रहें। विचारों को न रोकना हैं, न भगाना हैं, केवल साक्षी भाव से, द्दष्टा भाव से देखते रहें। कुछ ही देर में विचारों का प्रवाह शांत हो जायेगा। इस स्थिति में कुछ देर तक साक्षी भाव से देखते रहें।

अब अपने मन को श्वास-प्रश्वास की क्रिया पर लगा दें। देखें जब श्वास अन्दर आ रहा हैं तो पेट हल्का सा बाहर जा रहा हैं, और जब श्वास बाहर जा रहा हैं तो पेट अन्दर आ रहा हैं। शरीर में होने वाली इस प्राकृतिक क्रिया को कुछ देर तक साक्षी भाव, द्दष्टा भाव से देखने में मन को लगाये रखें।

अब मन को मात्र पेट के अन्दर-बाहर होने वाली क्रिया को देखने में लगा दें। इस पेट के अन्दर-बाहर होने वाली क्रिया को कुछ देर तक साक्षी भाव से देखते रहें। यदि साक्षी ध्यान करते समय बाहर की आवाज आदि सुनाई पड़े तो उसे भी बाधा न मानकर, मात्र साक्षी भाव से सुने। थोड़ी ही देर में मन शान्त होकर ध्यान स्वत: होने लगेगा।

कुछ दिनों के निरन्तर अभ्यास से आपकी इच्छाएँ आपके वश में हो जाएगी। तनाव, अवसाद, स्मरण शक्ति की कंमी, उच्च रक्तचाप आदि रोग दूर होकर शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती हैं। रात को सोने के समय साक्षी ध्यान लेटकर भी किया जा सकता हैं। साक्षी ध्यान का दीर्घ अभ्यास होने पर समाधि का दिव्य आनन्द प्राप्त होता हैं।

यौगिक शक्ति चक्र



हमारे शरीर में सन्निहित यौगिक शक्तिचक्र विविध प्रकार की अद्भुत शक्तियों के केंद्र हैं। इनमें सात चक्र प्रमुख हैं। जिनमें से पांच चक्र रीढ़ पर और दो ऊपर हैं। चर्म चक्षुओं से वे देखें नहीं जा सकते। उनको देखने के लिए इन्द्रिय संयम पूर्वक प्राणायाम एवं ध्यान आदि यौगिक क्रियाओं का अभ्यास करना होता हैं। यौगिक क्रियाओं के करने से ये विकसित होते हैं और इनकी अलौकिक शक्तियों का प्राकट्य होता हैं।

चक्रों का संक्षिप्त परिचय

1. **मूलाधार चक्र :-** यह चक्र गुदा से दो अंगुल ऊपर रीढ़ के आखिरी मनके के पास होता हैं, यहाँ कुण्डलिनी शक्ति निवास करती हैं। कुण्डलिनी शक्ति का आधार होने से इसे मूलाधार चक्र कहते हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से कामवासना आदि दुर्गुणों का नाश होता हैं तथा आनन्द व आरोग्यता की प्राप्ति होती हैं।

2. **स्वाधिष्ठान चक्र :-** यह चक्र जननेंद्रिय से ऊपर और नाभि से नीचे के भाग में रीढ़ पर होता हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से क्रूरता, आलस्य, प्रमाद आदि दुर्गुणों का नाश होता हैं तथा कर्म कौशलता का विकास होता हैं। नव शक्ति का संचार होता हैं।

3. **मणिपूरक चक्र :-** यह चक्र नाभि केन्द्र के पीछे रीढ़ पर होता हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से तृष्णा, ईर्ष्या, लज्जा, भय, घृणा आदि दुर्गुणों का नाश होता हैं। उदर रोगों व मधुमेह से बचाव होता हैं। साहस और उत्साह का संचार होता हैं।

4. **अनाहत चक्र :-** यह चक्र हृदय के पीछे रीढ़ पर होता हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से कपट, चिंता, कुतर्क, दंभ, अविवेक आदि दुर्गुणों का नाश होता हैं। प्रेम, करुणा और विवेक आदि दिव्य गुणों का विकास होता हैं। हृदय रोग से बचाव होता हैं।

5. **विशुद्धास्य चक्र :-** यह चक्र कण्ठ के पीछे रीढ़ पर होता हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से कण्ठ रोग दूर होकर कवित्व की प्राप्ति होती हैं। शांति, निरोगिता और दीर्घ जीवन की प्राप्ति होती हैं।

6. **आज्ञा चक्र :-** यह चक्र दोनों भ्रूवों के मध्य भृकुटी में आधा इंच अन्दर होता हैं। इसे तृतीय नेत्र कहा जाता हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से सभी चक्रों के ध्यान का फल प्राप्त होता हैं और व्यक्ति अत्यंत कुशाग्र बुद्धि हो जाता हैं। इस स्थान पर इडा, पिंगला और सुषुम्ना का मिलन होता हैं, जिससे दिव्य दृष्टि की प्राप्ति होती हैं।

7. **सहस्रार चक्र :-** यह चक्र ब्रह्मरन्ध्र से ऊपर होता हैं, यह शिव अर्थात दिव्य कल्याणकारी शक्तियों का निवास स्थान हैं। इस चक्र पर ध्यान करने से मनुष्य अपने-आप को जान लेता हैं, उसे असम्प्रज्ञात समाधि की प्राप्ति हो जाती हैं।

सनातन धर्म प्रतिज्ञा

ईश्वर की प्रार्थना करते हुए हम यह प्रतिज्ञा लेते हैं

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है। हम उस परमेश्वर को कभी नहीं भुलेंगे।

2. वेद, उपनिषद् व गीता सब सत्यविद्याओं की पुस्तक है। इनका पढना - पढाना, सुनना - सुनाना और आचरण में लाना हम सनातन धर्मियों का परम धर्म है।

3. जीवमात्र के कल्याण भाव से सत्य पर आधारित ईश्वर की आज्ञा का यथावत पालन और पक्षपात रहित न्याय सर्वहित करना धर्म है। जोकि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिये यही एक धर्म मानने योग्य है; वह सदा से चला आया है, उसको सनातन धर्म कहते हैं।

4. ईश्वर की आज्ञा को छोडकर और पक्षपात सहित अन्यायी होके मत, पंथ, सम्प्रदायों में उलझकर बिना परीक्षा करके अपना ही हित करने वाले अधर्मी है। उनमें अविद्या, हठ, अभिमान, चरित्रहीनता, क्रूरतादि दोषयुक्त होने के कारण वेद विद्या से विरुद्ध है, यह अधर्म सब मनुष्यों को छोड्ने के योग्य है।

5. हम उन मत, पंथ, सम्प्रदायों को नष्ट करने के लिए प्रतिबद्ध हैं जो मानवता के लिए हानिकारक है और उन्नति और मानवता के विकास में बाधक है क्योंकि यह असमानता पर आधारित है, और हम दृढ़ता के साथ यह विश्वास करते हैं कि सनातन धर्म ही सच्चा धर्म है।

6. हम पीर, फ़कीर, साईं, कसाई, बुद्ध में कोई आस्था नहीं रखेंगे और न ही उनकी पूजा करेंगे. हम यह भी नहीं मानते और न कभी मानेंगे कि सभी धर्म एक समान होते हैं तथा अल्लाह - ईश्वर एक हैं, हम इसे पागलपन और झूठा प्रचार-प्रसार मानते हैं।

7. हम से बड़ा हमारा परिवार, परिवार से बड़ा गाँव, गाँव से बड़ा नगर, नगर से बड़ा राज्य, राज्य से बड़ा राष्ट्र, राष्ट्र से बड़ा हमारा धर्म है। धर्म से बड़ा कुछ नहीं, धर्म से किसी की तुलना नहीं हो सकती। हम धर्म को सर्वप्रथम व सर्वोपरि मानेगे।

8. हम मनुष्य की समानता में विश्वास करते हैं। जन्म व कर्म के आधार पर किसी सनातन धर्मी के साथ भेदभाव नहीं करेंगे। हम शिक्षित बनेंगे, संगठित रहेंगे तथा सब काम धर्मानुसार, अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके ही करेंगे।

9. हम अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहकर, सब सनातन धर्मी हिन्दुओं की उन्नति में ही अपनी उन्नति समझेंगे।

10. हमें सनातन धर्म संस्कृति पर गर्व है। हम सदा इसके सुयोग्य प्रहरी बनने का प्रयत्न करते रहेंगे। हम अपने माता-पिता एवं गुरुजनों का सम्मान करेंगे और प्रत्येक के साथ विनीत रहेंगे। हम अपने धर्म और धर्मावलम्बियों के प्रति सत्यनिष्ठा की प्रतिज्ञा करते हैं। इनके कल्याण एवं समृद्धि में ही हमारा सुख निहित है।

ईश्वर के नाम से यह प्रतिज्ञा करने के पश्चात, यदि उसका पालन न किया जाए तो वह ईश्वर को धोखा देने के समान हैं। हमें ज्ञात हैं कि ऐसा करने पर आगे इसके लिए हमें दण्ड मिलेगा। इसलिए हम अपने आपको ईश्वर के दण्ड से मुक्त रखेंगे. हम इस प्रतिज्ञा के अनुसार ही चलेंगे।

वैज्ञानिक यौवन रक्षक - लेखक: विश्वजीत सिंह अनंत (युग क्रान्तिदर्शी)
प्रकाशक: सनातन संस्कृति संघ ट्रस्ट

सनातन संस्कृति संघ (ट्रस्ट) परिचय

शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कृति, नारी जागरण, पर्यावरण, व्यसन एवं कुरीति उन्मूलन के लिए कार्यरत धर्मार्थ ट्रस्ट

रजि. नं. 763/2014-15

सनातन संस्कृति संघ एक गैर सरकारी, सामाजिक, स्वयंसेवी ट्रस्ट हैं। इसका मुख्य उद्देश्य शिक्षा, स्वास्थ्य, संस्कृति, नारी जागरण, पर्यावरण, व्यसन एवं कुरीति उन्मूलन के कार्य करना है।

संसार के जन कल्याणार्थ मानवीय, नैतिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों को निजी, व्यवसायिक तथा सार्वजनिक जीवन में बढ़ावा देना। गौशालाओं एवं गुरूकुलों की स्थापना व संचालन करना। यह संस्था जिन क्षेत्रों में शिक्षायें एवं प्रशिक्षण दे रही है, वे हैं-

राष्ट्र जागरण, स्वदेशी स्वाभिमान, मूल्यनिष्ठ शिक्षा, चरित्र निर्माण, योग प्रशिक्षण, आपदा प्रबंधन, विश्व बंधुत्व, सम्पूर्ण स्वास्थ्य, गौवंश एवं ग्राम आधारित अर्थतंत्र की व्यवस्था, पर्यावरण प्रदूषण के प्रति जागृति, व्यक्तित्व विकास, महिला सशक्तिकरण, सामाजिक पुनर्निर्माण, नशीले पदार्थो से मुक्ति, अंधविश्वास एवं कुप्रथा निवारण, सकारात्मक चिंतन, वैज्ञानिक- आध्यात्मिक अनुभूति तथा जीने की कला।

सनातन संस्कृति संघ को दिये गये दान पर आयकर की धारा 80G के अंतर्गत टैक्स में छूट प्राप्त की जा सकती हैं।

सनातन संस्कृति संघ (ट्रस्ट) को अंशदान देने के इच्छुक दानदाता पंजाब नेशनल बैंक की स्थानीय सी0बी0एस0 शाखा में पहुंचकर

खाता संख्या A/C no :- 4579002100002930
IFSC - PUNB 0457900
Branch Code 457900 में अपना अंशदान जमा कर सकते है।

<> खाते में धन जमा करवाते समय खाते का नाम एवं शाखा का स्थान (सनातन संस्कृति संघ, पंजाब नैशनल बैंक, करावल नगर, दिल्ली) अवश्य जाँच कर लें।

"आओं अपना कर्तव्य निभाये, चरित्र निर्माण अभियान चलाये।" अभियान में सम्मिलित होकर अपना तथा भारत देश के भावी कर्णधार बच्चों, किशोरो व युवाओं का भविष्य उज्जवल बनायें।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें
पंजीकृत कार्यालय :- म. नं. 60, गली नं. 1.ए, शहीद भगत सिंह कालोनी, करावल नगर, दिल्ली. 110094

Mob. 9149105534, 9412458954